Con. 3. 4.13.47

अंक 4

संख्या 13

बुधवार,
30 जुलाई,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

1. परिचय-पत्र की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर ...1
2. अगस्त बैठक का कार्यकाल ...1
3. संघ-विधान-समिति की रिपोर्ट ...3

भारतीय विधान-परिषद्

बुधवार, 30 जुलाई सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कांस्टीट्यूशन हाल नई दिल्ली में प्रातः 10 बजे अध्यक्ष (माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में हुई।

परिचय-पत्र की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर

निम्नलिखित सदस्य ने अपना परिचय-पत्र पेश किया तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर किया:

श्री मुकन्दबिहारी मल्लिक (पश्चिमी बंगाल: जनरल)

अगस्त बैठक का कार्यकाल

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, क्या कृपा करके आप हमें बतायेंगे कि अगस्त मास की बैठक कब तक चलेगी, ताकि उसके अनुसार हम अपने कार्यक्रम की व्यवस्था करें?

***अध्यक्ष:** सब सदस्यों को पता है कि 15 अगस्त को हम एक उत्सव मनायेंगे और यह आशा की जाती है कि उस दिन सब सदस्य उपस्थित होंगे और उत्सव में भाग लेंगे। 16 ता. को शनिवार है और 17 को रविवार, इन दोनों दिन हम कोई कार्य नहीं करते हैं। 18 और 19 अगस्त को ईद होगी और इन दोनों दिन भी कार्य नहीं होगा। अतः अगले दिन 20 तारीख को हम कार्य कर सकते हैं, और फिर सदस्यों पर निर्भर होगा कि वह कितने दिन में कार्य समाप्त करेंगे। संघ-अधिकार-समिति और परामर्शदातृ समिति (Advisory Committee)- की रिपोर्टों पर विचार करना होगा और यदि इसमें से कुछ पर विचार करना बाकी भी रह जायेगा, जिसकी मुझे आशा नहीं, तो उस समय वह भी पूरा कर लिया जाएगा। इसके अतिरिक्त और विषय भी हो सकते हैं, परन्तु विचार करने के लिए यही दो आवश्यक विषय होंगे। मुझे आशा है कि इन दोनों विषयों पर विचार करने में सात या आठ दिन से अधिक नहीं लगेंगे।

***एक माननीय सदस्य:** अल्पसंख्यक-समिति की रिपोर्ट के विषय में क्या होगा?

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

***अध्यक्षः** परामर्शदातृ-समिति की रिपोर्ट में ही वह शामिल है।

***प्रो. एन.जी. रंगा** (मद्रासः जनरल): भारतीय संघ और प्रान्तों के सम्बन्ध में जो वाक्यांश हैं और जिनका अभी तक निपटारा नहीं हो पाया है, उनके विषय में क्या होगा?

***अध्यक्षः** यदि सम्भव हुआ तो इस रिपोर्ट पर विचार करने का कार्य भी हम समाप्त कर देंगे। परन्तु यदि कुछ बचा रह जायेगा तो उस समय उस पर भी विचार कर लिया जायेगा।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रासः जनरल): मैं यह बताना चाहता हूं कि चूंकि 18 और 19 तारीखों की छुट्टियां हैं, हम अपना कार्य 16 और 17 को कर सकते हैं; यद्यपि 17 को रविवार पड़ता है। यह भाव मिथ्या ही है कि रविवार को कार्य न हो; क्योंकि जब दो छुट्टियां आ गई हैं, तो हम रविवार को भी कार्य कर सकते हैं।

संशोधनों के विषय में मैं यह बताना चाहता हूं कि हमारे घर पहुंचने के बाद ही उनकी नकलें शीघ्र हमारे पास भेज देनी चाहिए, जिससे उन पर विचार करने के लिए हम तैयार होकर आयें।

***माननीय श्री बी.जी. खेर** (बम्बईः जनरल): सबसे अच्छी बात तो यह होगी कि 20 तारीख से लेकर मास के अंत तक हम कार्य करें।

***अध्यक्षः** यही करने का निश्चय हो रहा है।

पं. श्रीकृष्णदत्त पालीवाल (संयुक्त प्रांतः जनरल): सभापतिजी, मुमकिन है 16 तारीख को देश में स्वाधीनता दिवस मनाया जायेगा और बहुत से मेम्बर यह चाहेंगे कि 15 को यहां शामिल होकर फिर वापस चले जायें, अपने-अपने यहां उत्सवों में शामिल होने। इसलिए 16 तारीख को काम करना मुनासिब नहीं होगा।

अध्यक्षः आप क्या चाहते हैं?

पं. श्री कृष्णदत्त पालीवालः मैं चाहता हूं कि बहुत से मेम्बर स्वाधीनता दिवस के सिलसिले में अपनी जगह वापस जाना चाहेंगे; इसलिए 16 तारीख को क्यों काम न होना चाहिये।

***अध्यक्षः** जो वापस जाना चाहेगा वह जा सकेगा। 20 तारीख से हम लोग फिर काम करना शुरू करेंगे।

संघ-विधान समिति की रिपोर्ट

भाग 4—अध्याय 1—वाक्यांश 7

***अध्यक्षः** जो वाक्यांश बच रहे हैं, अब उन पर हम विचार करेंगे। वाक्यांश 7 ऐसा है, जिस पर वाद-विवाद नहीं हुआ है। मैं समझता हूं कि वाक्यांश 7 के स्थान पर एक और वाक्यांश है। सर गोपालस्वामी आयंगर, क्या वह तैयार है?

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर** (मद्रासः जनरल): श्रीमान्, मैंने वाक्यांश 7 (2) (ख) के सम्बन्ध में एक संशोधन की सूचना दी है। परन्तु उसके विषय में कुछ थोड़ी-सी कठिनाई है। मैं समझता हूं कि कल प्रातःकाल मैं उस संशोधन को सभा के आगे पेश कर सकूंगा; क्योंकि मुझे उस संशोधन को इस प्रकार लिखना है, जिससे सभा के दोनों भाग उसको स्वीकार कर लें।

***अध्यक्षः** फिर हम उसको छोड़कर भाग 5 को लेते हैं।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** एक और वाक्यांश है जो बचा हुआ है और वह वाक्यांश नं. 14 है। उसके विषय में भी मुझे आशा है कि कल प्रातःकाल एक सर्वसम्मत योजना की शक्ल में मैं उसे पेश करूंगा।

***अध्यक्षः** ऐसी परिस्थिति में सभा नं. 5 पर विचार प्रारम्भ करेगी, जो कानूनी सभा के अधिकारों के बटवारे (Distribution of Legislative Powers) के सम्बन्ध में है; जो संघ और उसके अंगों में होना है। यद्यपि इसमें कोई विशेष संशोधन नहीं है, लेकिन रियासतों के मंत्रियों का एक सुझाव है कि इस पर विचार तब तक रोक रखें जब तक कि हम संघ-अधिकार-समिति (Union Powers Committee) की रिपोर्ट पर विचार न कर लें। यही अभिप्राय है तो?

***सर बी.एल. मित्तर** (बड़ौदा): ऐसा ही है। इसके सम्बन्ध में मेरा एक संशोधन है।

***अध्यक्षः** क्या उस संशोधन को इस समय पेश करना आवश्यक है? मेरा विचार है कि भाग नं. 5 पर विचार हम रोक सकते हैं।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** हमें कोई आपत्ति नहीं, यदि उसे रोक रखा जाये।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि सभा की यही इच्छा है कि संघ-अधिकार समिति (Union Powers Committee) की रिपोर्ट पर जब तक विचार न हो जाए तब तक के लिए भाग नं. 5 पर विचार करना रोक रखा जाये।

अब सभा भाग नं. 6 पर विचार करेगी।

भाग 6—वाक्यांश 1

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू** (संयुक्तप्रांतः जनरल): श्रीमान्, मैं यह खण्ड पेश करता हूं:

''संघ की पार्लियामेंट एक संघीय विषयों के लिए कानून बनाने में, उस विषय के सम्बन्ध में किसी कर्त्तव्य को संघीय सरकार की ओर से सम्पादित करने का काम, किसी अंग की सरकार पर चाहे वह प्रांत की हो या देशी रियासत की या अन्य क्षेत्र की हो अथवा उस सरकार के किसी हाकिम पर सौंप सकती है।''

यह एक बहुत सरल व्यवस्था है और इस सम्बन्ध में मुझे कुछ कहने की आवश्यकता नहीं।

***अध्यक्षः** रायसाहब रघुराज सिंह के नाम में इस वाक्यांश के सम्बन्ध में एक संशोधन है। क्या वह उसको पेश करते हैं?

(वह सदस्य उपस्थित नहीं थे, अतः संशोधन पेश नहीं किया गया।)

(श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले ने अपना संशोधन नम्बर 362 पेश नहीं किया)।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगालः मुस्लिम): मैं यह संशोधन पेश करता हूं कि:

''खण्ड दो के उप-खण्ड (1) में 'जो इस अंग पर लागू होता है' इन शब्दों की जगह 'जहां तक यह उस अंग पर लागू होता है' ये शब्द रखे जायें।''

मेरा एक दूसरा संशोधन भी है जो उप-खण्ड (2) के सम्बन्ध में है।

***अध्यक्षः** माननीय पंडित नेहरू ने केवल खण्ड (1) को ही पेश किया है; अतः खण्ड (1) के सम्बन्ध में जो संशोधन हों वही अब पेश किए जा सकते हैं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मेरा संशोधन केवल शाब्दिक है।

***रायबहादुर लाला राजकुंवर** (पूर्वी रियासत समूह): रायसाहब रघुराज सिंह अभी यहां पहुंचे हैं, परन्तु मैं संशोधन को पेश करने के लिए तैयार हूं। मैं यह संशोधन रखता हूं कि:

''खण्ड 1 के स्थान में निम्नलिखित अंश रखा जाये:

'प्रांतीय सरकार या संघ में सम्मिलित रियासत (state) के शासक की स्वीकृति से संघ की सरकार किसी शर्त्त या बिना शर्त्त के ही उस प्रांतीय सरकार या शासक को या उनके किन्हीं अधिकारियों को उस मामले के सम्बन्ध में, जिसमें कि संघ का शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार लागू होना हो, किसी भी कर्त्तव्य को सम्पादित करने का भार दे सकता है।

संघ की व्यवस्थापिका सभा का एक्ट जो सम्मिलित रियासत पर लागू होता है, रियासत या उसके उन अफसरों और अधिकारियों को, जो शासक द्वारा इसी प्रयोजन के लिए नियत किए गए हों; अधि कार दे सकता है और उनको कार्य सौंप सकता है।''

***मि. तजम्मुल हुसैन** (बिहार: मुस्लिम): श्रीमान्, एक वैधानिक प्रश्न है। जब वह सदस्य, जिसने संशोधन की सूचना दी हो, सभा में उपस्थित हो तो क्या दूसरा सदस्य संशोधन को पेश कर सकता है?

***अध्यक्ष:** दोनों सदस्यों ने संशोधन पर हस्ताक्षर किए हैं, इस कारण संशोधन उपस्थित करने में वह नियम के अन्दर हैं।

रायबहादुर लाला राजकुंवर: उस संशोधन के शब्द जिसे मैंने अभी पेश किया है, भारतीय सरकार के 1935 के एक्ट धारा 124, उपधारा (1) और (3) के शब्दों के आधार पर हैं। इसका यह प्रयोजन है कि जब कभी वह कार्य, जो ऐसे मामले से सम्बन्ध रखता हो, संघ के शासन प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार के अंतर्गत हो, प्रान्तीय सरकार या रियासत के शासक या उसके किसी अफसर को सौंपा जाये, तो यह उनकी स्वीकृति से करना चाहिए, न कि स्वतंत्र रूप से, और रियासत के अफसरों को शासक ही नियत करे, संघ नहीं। श्रीमान्, इस संशोधन की आवश्यकता इस कारण है कि प्रान्तीय सरकार या किसी एक रियासत को

[रायबहादुर लाला राजकुंवर]

अधिकार सौंपने का काम उनकी मरज़ी से ही होना चाहिए और विशेषकर भारत की रियासतों के सम्बन्ध में तो ऐसा ही करना उचित है और उन अधिकारों को प्रयोग में लाने के लिए अफसर शासक द्वारा ही चुने चाहिएं। इस कारण मैं सिफारिश करता हूं कि सभा इस संशोधन पर विचार करे और इसे स्वीकार करे।

***अध्यक्ष:** क्या कोई और इस वाक्यांश या संशोधन पर बोलना चाहते हैं? अब दोनों पर वाद-विवाद हो सकता है।

***रायसाहब रघुराज सिंह** (पूर्वी रियासतों का समूह–2): श्री अध्यक्ष महोदय, पहले के एक वाक्यांश में संघ के अधिकारों का सौंपना मंजूर कर लिया गया है, अर्थात् वाक्यांश 9 में। इस बात को भी स्वीकार कर लिया है कि संघ की इच्छा अनुसार यह वापस लिया जा सकता है। उस संशोधन में जो अभी पेश किया गया है, केवल इतना ही कहा गया है कि जब संघ की सरकार रियासत को अधिकार सौंपे, तो यह कार्य रियासत की अनुमति से होना चाहिए। अधिकारों का प्रयोग किसी ऐसी एजेंसी के द्वारा होना चाहिए, जो रियासत की सरकार या उसके शासक द्वारा स्वीकृत हो।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, यह संशोधन वास्तव में उसी बात को दुहराता है, जो 1935 के एक्ट की 124वीं धारा में दी हुई है। खण्ड 1 जो उपस्थित किया गया है, 124वीं धारा के तात्पर्य को बताने के लिए था। दो विषय हैं, जिनका ज़िक्र संशोधन के प्रस्तावक और अनुमोदक ने किया है और जो विचार करने के योग्य हैं। पहली बात जो मैं समझा, वह यह थी कि संघीय विषयों (federal subjects) के सम्बन्ध में शासन के अधिकारों को प्राँतों या रियासतों को जो सौंपने का काम है, वह प्रांतीय या रियासतों की सरकार की मरज़ी से ही होना चाहिए। दूसरी बात यह थी कि भारतीय रियासत के अफसरों को नियुक्त करने का कार्य जो अफसर-संघ के कानूनों से दिए हुए अधिकारों का प्रयोग करेंगे, शासक स्वयं करेगा या उसकी अनुमति से किया जाएगा। इस विषय में मैं कहूंगा कि जब कभी प्रांत या रियासत की सरकारों को या उन सरकारों के अफसरों को इस प्रकार के अधिकार दिए जाएं तो केन्द्र और अंगों (Units) के बीच में पहले परामर्श अवश्य होगा। हमें यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि जिन कार्यों को सम्पादित करने का भार उन्हें सौंपा जाये, वे संघीय विषयों के शासन-प्रबन्ध से ही सम्बन्ध रखते हों। संघीय विषयों के शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी व्यवस्था का अधिकार अन्ततः केन्द्र को ही होना चाहिए। हम परामर्श की व्यवस्था

रख सकते हैं, परन्तु मैं विचार करता हूं कि संघीय शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकारों को प्रयोग में लाने का जो मूल सिद्धान्त है, उसके प्रतिकूल यह बात होगी, यदि हम यह शर्त्त लगा दें कि अंग-सरकार (Unit Government) या उस अंग-सरकार के मुख्य अफसर की मंजूरी ऐसे अधिकारों के देने से पहले होनी चाहिए। इस संशोधन का तात्पर्य अवश्य ही भावी संघीय सरकार (Federal Government) मान लेगी, और संघीय कानून द्वारा या अन्य प्रकार इन कामों को सौंपने के पहले केन्द्रीय और अंग में यथेष्ट परामर्श अवश्य होगा। इसलिए श्रीमान्, मैं इस संशोधन के स्वीकार करने की सिफारिश नहीं कर सकता।

***रायबहादुर लाला राजकुंवर:** सर गोपालस्वामी आयंगर के आश्वासन को दृष्टि में रखकर मैं संशोधन वापस लेता हूं।

***अध्यक्ष:** अब मैं इस खण्ड पर मत लेता हूं। संशोधनकर्त्ता ने संशोधन वापस ले लिया है। मेरा विचार है कि सभा उनको संशोधन के वापस लेने की आज्ञा देगी। अब मैं मौलिक खण्ड पर वोट लूंगा।

भाग 6 खण्ड 1 स्वीकार कर लिया गया।

भाग 6 खण्ड 2

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** खण्ड 2 इस प्रकार है:

''(1) अंग की सरकार का कर्त्तव्य होगा कि वह अपने शासन-प्रबंध सम्बन्धी अधिकार और शक्ति को जहां इस उद्देश्य के लिए यह आवश्यक और लागू होता हो, इस तरह प्रयोग में लायें कि हर संघीय कानून का, जो उस अंग पर लागू किया जाये, उस प्रदेश में यथोचित प्रभाव पड़े। संघीय सरकार को अधिकार होगा कि उस उद्देश्य-सिद्धि के लिए वह अंग की सरकार को आदेश दे।

(2) संघीय सरकार का अधिकार यहां तक होगा कि वह अंग की सरकार को आदेश दे कि उस मामले के सम्बन्ध में, जिसका किसी संघीय विषय सम्बन्धी शासन पर प्रभाव पड़ता हो, अपने शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार और शक्ति का वह किस तरह प्रयोग करे।''

यह दोनों उप-खण्ड वास्तव में 1935 के एक्ट के नियमों को ही दुहराते हैं।

[माननीय सन एन. गोपालस्वामी आयंगर]

इनका तात्पर्य यही है कि केन्द्र और अंग में कोई परस्पर विरोध न हो। इसका यह भी प्रयोजन है कि अंग-सरकार अपने शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार को इस प्रकार प्रयोग में लाये कि संघीय विषयों के सम्बन्ध में इसका जो शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार है, उससे कोई विरोध न पड़े। मैं समझता हूं कि अधिक व्याख्या अनावश्यक है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** मेरा प्रस्ताव है कि:

''खण्ड 2 के उप-खण्ड (1) में इन शब्दों 'जो अंग पर लागू होता है' के स्थान पर 'जहां तक अंग पर लागू हो' यह शब्द रखे जाएं।''

श्रीमान्, क्या मैं अपने संशोधन, नं. 365 को भी पेश कर सकता हूं?

***अध्यक्षः** हां!

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** मेरा दूसरा संशोधन यह है कि:

''खण्ड (2) के उप-खण्ड (2) में 'अंग की सरकार' की जगह 'अंग की सरकारें' रखा जाए।''

श्रीमान्, मैं निवेदन करता हूं कि यह संशोधन केवल शाब्दिक हैं और मसाविदा समिति के सुझाव के लिए रखे गए हैं।

(सर्वश्री ठाकुरदास भार्गव, के. सन्तानम् और पी.एस. देशमुख ने अपने संशोधन नम्बर 365, 366 और 367 पेश नहीं किए।)

***रायसाहब रघुराज सिंहः** मैं प्रस्ताव करता हूं कि खण्ड (2) के पश्चात् निम्न निर्दिष्ट नया खण्ड (3) शामिल किया जाये:

''3. खण्ड (1) के आधार पर जहां प्रांत या संघ में सम्मिलित रियासत अथवा उनके अधिकारियों या कर्मचारियों पर अधिकार और कर्तव्य सौंपे जायेंगे, वहां संघ, प्रांत या रियासत को ऐसी रकम अदा करेगा, जो उनके बीच तय हुई हो; या इसके तय न होने पर वह ऐसी रकम अदा करेगा, जिसे वह पंच निश्चित करेगा जिसको सर्वोच्च न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश शासन सम्बन्धी उस अतिरिक्त

खर्च के सिलसिले में नियुक्त करेंगे, जो इन अधिकारों और कर्त्तव्यों को कार्यान्वित करने में प्रांत या रियासत को उठाना पड़ा हो।''

इस संशोधन का तात्पर्य स्पष्ट ही है और वह यह है कि जब किसी रियासत या प्रांत या संघ में सम्मिलित रियासत को अधिकार सौंपा जाये, तो उन अधिकारों के प्रयोग में लाने में जो खर्च पड़े वह रकम उस रियासत या प्रांत को दी जाये।

***अध्यक्षः** इस खण्ड के सम्बन्ध में और कोई संशोधन नहीं है; अतः अब खण्ड और संशोधनों पर बहस हो सकती है। जो सदस्य बोलना चाहें, वह बोल सकते हैं।

श्री रामसहाय (ग्वालियर): सभापति महोदय, रायसाहब का जो अमेंडमेंट है उसकी ताईद में मैं अर्ज करना चाहता हूं। मेरा अर्ज करना यह है कि यह अमेंडमेंट बहुत ही मुनासिब है और उसका होना निहायत जरूरी है। गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट 1935, सेक्शन 124, सब-सेक्शन (1) में Power of Federation to confer powers on Provinces and States with the consent of the Government of a Province or the Rulers of Federated State का विधान है, मगर इस धारा में यह अलफाज निकाल दिये गये हैं। सैन्टर को मजबूत बनाने के लिए बिला उनकी कन्सेन्ट ऐसा अख्तियार Federation को देना मुनासिब ही था। लेकिन सब-सेक्शन (4), सेक्शन 124, गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट का निकालना किसी तरह मुनासिब नहीं है। यह तरमीम रायसाहब ने इसी सब-सेक्शन के आधार पर की है। इसलिए मैं यह मुनासिब समझता हूं कि हाउस इस तरमीम को जरूर मंजूर कर ले। इस तरमीम को मंजूर करने से जो कुछ अखराजात सेन्टर के लिये प्रान्तीय गवर्नमेंट या स्टेट को करने होंगे, वह उससे पा सकेंगे। प्रान्त या स्टेट को आर्थिक स्थिति मजबूत, कायम रखने के लिये यह निहायत जरूरी है कि इस तरह के अखराजात उनको दिये जाएं। इसलिए मैं इस तरमीम की ताईद करता हूं।

***रायबहादुर लाला राजकुंवरः** वह संशोधन जिसका मैं समर्थन कर रहा हूं, स्वयं स्पष्ट है और उसकी पुष्टि में तर्क देने की आवश्यकता नहीं है। उसका उद्देश्य यही है कि एक कानून बनाया जाये जिसके द्वारा संघ की सरकार, संघ में सम्मिलित अंग को शासन का खर्च दे, जब कि संघ के किसी विषय का शासन उस अंग को सौंपा गया हो। यह व्यवस्था बहुत आवश्यक है और यह भारतीय सरकार के एक्ट की धारा 124 की उपधारा (4) में दी हुई है। मेरा

[रायबहादुर लाला राजकुंवर]

यह कहना है कि यह आवश्यक व्यवस्था है और विधान में शामिल की जाये। इस समय विधान-समिति की सिफारिशों में ऐसे खर्चों का कोई जिक्र नहीं है। चूंकि यह आवश्यक व्यवस्था है, इसलिए यह सुझाया जाता है कि सभा इसको स्वीकार करे।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** मि. नजीरुद्दीन अहमद ने जो दो संशोधन प्रस्तावित किए हैं, उनमें से पहला यह है कि यह शब्द 'जो अंग पर लागू होता है' इसके स्थान में 'जहां तक वह अंग पर लागू होता हो' यह शब्द होने चाहिएं। यह इस खास उप-खण्ड के मस्विदे को अच्छा बनाने के लिए एक सुझाव-सा है। यह कहना कठिन है कि इससे वह मसविदा सुधरेगा या नहीं। मैं समझता हूं कि जैसे संशोधन से तात्पर्य सिद्ध हो जाता है, वैसे ही उप-खण्ड के मूल स्वरूप से भी इसका अभिप्राय सिद्ध हो जाता है। जैसा यह खण्ड है, मैं इसको इसी के रूप में छोड़ता हूं। इस कारण मैं इस संशोधन को स्वीकार नहीं करता। उनका दूसरा संशोधन यह है कि 'अंग की सरकार' इन शब्दों के स्थान में 'अंग की सरकारें' यह शब्द रखे जाएं। इसे मैं स्वीकार करता हूं। इस खण्ड पर दूसरा संशोधन है, नम्बर 368 का। भारतीय सरकार के एक्ट की धारा 124 की उप-धारा (4) से यह लिया गया है। जब इस सभा में वाद-विवाद के लिए विधान का मसविदा बनाया गया था, तो यह जरूरी नहीं समझा गया था कि सारे आवश्यक अधिकार और नियम इसी मसविदे में शामिल करने चाहिएं। धारा 124 की यह उप-धारा नहीं शामिल की गई, इसका यह कारण नहीं था कि जब अंतिम मसविदा बने तो उसमें यह शामिल न किया जाये। परन्तु चूंकि यह खण्ड एक अतिरिक्त खण्ड के रूप में प्रस्तावित किया गया है, मैं इसे स्वीकार करता हूं और यह भावी विधान में शामिल किया जाएगा।

***अध्यक्ष:** पहले मैं संशोधनों पर मत लूंगा। पहला संशोधन मि. नजीरुद्दीन अहमद का है वह यह है कि:

''वाक्यांश (2) के उप-वाक्यांश (1) में 'जो उस अंग पर लागू होता है' इन शब्दों के स्थान में 'जहां तक वह अंग पर लागू होता हो' ये शब्द रखे जाएं।''

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** दूसरा संशोधन यह है कि:

''वाक्यांश (2) के उप-वाक्यांश (2) में 'अंग की सरकार' इन शब्दों के स्थान में 'अंग की सरकारें' ये शब्द रखे जायें।''

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** अंतिम संशोधन यह है कि खण्ड (2) के पश्चात् निम्ननिर्दिष्ट नया खण्ड (3) शामिल किया जाये:

''3. खण्ड (1) के आधार पर जहां प्रांत या संघ में सम्मिलित रियासत अथवा उनके अधिकारियों या कर्मचारियों पर अधिकार और कर्त्तव्य सौंपे जायेंगे वहां संघ, प्रांत या रियासत को ऐसी रकम अदा करेगा, जो उनके बीच तय हुई हो या इसके तय न होने पर वह ऐसी रकम अदा करेगा, जिसे वह पंच निश्चित करेगा जिसको सर्वोच्च न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश शासन सम्बन्धी उस अतिरिक्त खर्च के सिलसिले में नियुक्त करेंगे जो इन अधिकारों और कर्तव्यों को कार्यान्वित करने में प्रांत या रियासत को उठाना पड़ा हो।''

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** संशोधित खंड पर अब सभा की राय ली जाती है।

संशोधित खंड स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** एक दूसरे संशोधन की सूचना दी गई है। संशोधन यह है कि एक दूसरा खण्ड जोड़ा जाये। इसकी सूचना चार सदस्यों ने दी है।

***श्री एच.आर. गुरुव रेड्डी** (मैसूर): मैं इस संशोधन को पेश करता हूं कि खण्ड 2 के बाद निम्ननिर्दिष्ट वाक्य जोड़ दिया जायें:

''3. संघ में सम्मिलित होने वाली रियासत को, संघ-सरकार की पूर्व स्वीकृति से इस बात का अधिकार होगा कि वह गवर्नर वाले या चीफ कमिश्नर वाले किसी प्रांत से या संघ में शामिल होने वाली किसी रियासत से इस सम्बन्ध में समझौता करके कानून निर्माण

[श्री एच.आर. गुरुव रेड्डी]

सम्बन्धी, शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी तथा न्याय सम्बन्धी किन्ही कर्तव्यों को, जो उस प्रांत या चीफ कमिश्नर वाले प्रांत या संघ में शामिल होने वाली रियासत को सौंपे गये हों, स्वयं ले सकती है; किन्तु शर्त यह है कि समझौता, जहां तक प्रांतों या चीफ कमिश्नर वाले प्रांतों का सम्बन्ध है, ऐसे विषय के सम्बन्ध में हो जो प्रांतीय या सहगामी विषयों की सूची में हो और जहां तक संघ में शामिल होने वाली रियासत का सम्बन्ध है, ऐसे विषय के सम्बन्ध में हो जो संघीय सूची में शामिल न हो।

ऐसा समझौता हो जाने पर रियासत समझौते की शर्तो के अनुसार कानून-निर्माण सम्बन्धी, शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी या न्याय सम्बंधी कर्त्तव्यों को, जो समझौते में निर्धारित किए गए हों, अपने समुचित अधिकारियों द्वारा सम्पादित करा सकती है।''

श्रीमान्, यह प्रान्तीय विधान-समिति (Provincial Constitution Committee) की रिपोर्ट के खण्ड 8 के अनुसार है। प्रान्तीय विधान के भाग 1 के खण्ड 8 पर तत्सम्बन्धी समिति की जो रिपोर्ट है, उसे इस सभा ने स्वीकार किया है। उसमें यह व्यवस्था है कि कोई प्रान्तीय अंग (Unit) रियासती अंग के किसी भाग को, जो उसके प्रदेश में पड़ता है, ले सकता है और उसका शासनप्रबन्ध कर सकता है। इसी प्रकार एक वाक्यांश जो रियासती अंग को यह अधिकार देता है कि दूसरे प्रांतों के भागों को अपने अधिकार में ले और उसका शासन-प्रबन्ध करे, अब यहां प्रस्तावित किया गया है।

श्रीमान्, यह उचित और न्यायसंगत है कि यदि शासन-प्रबन्ध के लिये किसी रियासती अंग के किसी भाग को ले लिया जाता है, तो ऐसी रियासत को जो शासन-प्रबन्ध करने में उसी तरह समर्थ और योग्य हो, उसे भी यह आजादी मिलनी चाहिये कि वह किसी प्रांत के किसी भाग को शासन-प्रबन्ध के लिये ले ले। किसी भी हल्के में यह सन्देह नहीं होना चाहिये कि इस खण्ड का पेश किया जाना उचित और न्यायसंगत नहीं है।

श्रीमान्, यहां कुछ पाबंदियां रखी गई हैं। सबसे पहली पाबंदी यह कि यह बात संघ की सरकार (Federal Government) की पूर्व स्वीकृति से होनी चाहिये, जो सर्वसत्ता-सम्पन्न है। इस बात का भय नहीं है कि ऐसा समझौता संघ की सरकार को बगैर सामने रखे और बगैर उसकी मंजूरी लिए ही दो स्वार्थी दलों

में जल्दी-जल्दी कर लिया जायेगा। दूसरी पाबंदी यह है कि यह समझौता समुचित होना चाहिये, जिसके आधार पर यह कार्य किया जा सके। इस कारण जब तक इस संशोधन के दोनों भाग कार्यरूप में परिवर्तित नहीं होते, तब तक कोई रियासत शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी ऐसा काम अपने हाथ में नहीं ले सकती।

श्रीमान्, यह उचित और ठीक ही है कि जब प्रांतीय-विधान (Provincial Constitution) में संशोधित वाक्यांश 8 कानून बना दिया गया है, तो सभा के लिये उचित है कि वह रियासतों को भी यही स्वतंत्रता दे। इससे अधिक कहने की यहां आवश्यकता नहीं है।

***श्री के.एम. मुंशी** (बम्बई: जनरल) मैं प्रस्ताव रखता हूं कि प्रस्तुत प्रस्ताव पर विचार स्थगित रखा जाये। इसका कारण बहुत ही सरल है। प्रांतीय विधान पर विचार करते समय सभा ने निर्णय किया था कि रियासतों के सम्बन्ध में प्रांत को एक ऐसा ही अधिकार देना चाहिये। फिर यह उचित मालूम होता है कि रियासतों-को भी ऐसा ही अधिकार मिलना चाहिए। परन्तु साथ ही जब तक संघ के अधिकारों पर वाद-विवाद और विचार न हो जाये और सभा इस स्थिति में न हो उन विषयों के स्वरूप और कार्य-क्षेत्र के सम्बन्ध में जिनके निमित रियासतें संघ में सम्मिलित हो रही हैं, निर्णय कर सके, यह असामयिक होगा कि इस प्रस्ताव पर विचार किया जाये। यह खंड अलग ही है। यह एक संशोधन के समान नहीं है, परन्तु एक स्वतंत्र प्रस्ताव ही है। उसके गुण-दोषों पर इस समय आलोचना करना मेरे विचार में उचित नहीं होगा। इस कारण मैं निवेदन करता हूं, श्रीमान्, कि इस पर उस समय तक वाद-विवाद स्थगित रखा जाये, जब तक सभा संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट पर विचार न कर ले।

(श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय बोलने के लिये खड़े हुए।)

***अध्यक्ष:** (श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय की ओर) क्या आप मुख्य संशोधन पर बोलना चाहते हैं या श्री मुंशी के सुझाव पर?

***श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय** (ग्वालियर): श्री मुंशी के सुझाव पर।

श्रीमान्, मैं एक रियासत से आया हूं। मैं इस संशोधन का जो कि प्रस्तावित किया गया है, पूर्णतया विरोध करता हूं। जब तक रियासतों और प्रांतों में राजनैतिक दशा का भेद रहे, तब तक रियासतों को अधिक अधिकार न दिये जायें और न

[श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय]

ऐसे अधिकार दिये जायें जिनको अभी प्रस्तावित किया गया है। परन्तु, क्योंकि यह विवादग्रस्त विषय है, इस कारण मेरा विचार है कि यह स्थगित होना चाहिए, जैसा श्री मुंशी ने कहा है।

***श्री एच.आर. गुरुव रेड्डी:** इसके स्थगित करने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है।

***अध्यक्ष:** सुझाव यह है कि इस खण्ड पर विचार उस समय तक टाल दिया जाये, जब तक संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट पर विचार न हो जाये।

क्या सभा की यही इच्छा है कि यह स्थगित कर दिया जाये?

***अनेक माननीय सदस्य:** हां।

***अध्यक्ष:** यह स्थगित कर दिया गया।

***अध्यक्ष:** श्री अनन्तशयनम् आयंगर, आपने एक प्रस्ताव की सूचना दी थी कि एक और खण्ड पूरक सूची (Supplementary List) में जोड़ दिया जाये।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** मैं उसको पेश नहीं करता हूं। श्रीमती दुर्गाबाई भी उसे पेश नहीं कर रही हैं।

मैं अपने संशोधन नं. 5 को भी, जो नम्बर 4 की पूरक परिशिष्ट सूची में है, पेश नहीं करता हूं।

भाग 7

***अध्यक्ष:** अब हम भाग 7 को लेंगे।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, यह विधान का बहुत आवश्यकीय भाग है, जिस पर कि हम विचार कर रहे हैं। पहले के दो खण्ड बड़े महत्व के विषयों को उपस्थित करते हैं और यदि आप सहमत हों और यह सभा भी इसे माने तो मैं अनुमति चाहूंगा कि खण्ड 1 और 2 को अगली बैठक में पेश करूं। इस सम्बन्ध में मैं केवल यह कहना चाहता हूं कि हमारे लिए यह आवश्यक होगा कि हमको खण्ड 2 के विषय में अधिक बातें मालूम हो जायें, जिससे हम उन आलोचनाओं का उत्तर दे सकें, जो इन खण्डों के सम्बन्ध में की जायें। इन खण्डों के निर्माताओं का यह विचार है कि हम आर्थिक विषय के सम्बन्ध में विशेषज्ञों की एक समिति बनायें, जो विस्तार-पूर्वक जांच-पड़ताल

करे और प्रस्तावना पेश करे, जिसे इस विधान के मूल शब्दों में जोड़ दिया जाये। मैं आशा करता हूं कि वह आपसे प्रार्थना करेंगे कि आप इस प्रकार की समिति नियुक्त करें, जिससे उस समिति की रिपोर्ट अगली बैठक से पहले ही, या बैठक के आरम्भ होने के थोड़े समय पश्चात् ही हमको प्राप्त हो सके। यदि आप सहमत हों तो मैं खण्ड 1 और 2 को बाद में पेश करूं।

वाक्यांश 3

***अध्यक्ष:** अब आप खण्ड 3 को ले सकते हैं।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** खण्ड 3 को मैं पेश करता हूं:

''संघ की सरकार को अधिकार होगा कि वह किसी उद्देश्य के लिये संघ के राजस्व में से आर्थिक सहायता प्रदान करे, चाहे वह उद्देश्य ऐसा न हो जिसके विषय में संघ की पार्लियामेंट नियम बना सकती हो।''

यह इस प्रयोजन से रखा गया है कि संघ की सरकार प्रांतीय कार्य-क्षेत्र के अंतर्गत आने वाले कामों में धन से सहायता कर सके। इसे और अच्छी तरह यों कह सकते हैं कि उन कामों में सहायता दे सकेंगे, जो संघ के कार्य-क्षेत्र से बाहर हों, इस प्रकार के अधिकार की आवश्यकता है, क्योंकि इसके द्वारा संघ की सरकार उस राजस्व को जो संघ के शासन के कार्यो पर खर्च करने के लिए इकट्ठा किया गया है, उनको उन विषयों पर भी खर्च कर सके जो उस क्षेत्र के अन्दर नहीं हों। यह अधिकार एक दूसरी तरह भी उपयोगी होगा। भिन्न-भिन्न दिशाओं में तरह-तरह के विकास मूलक कार्य करने हैं और अंगों को ही यह सब करना होगा। सम्भव है कि इन कार्यों के संचालन के लिये अंग के पास यथेष्ट धन न हो। तरक्की के इन कामों के लिए यद्यपि यह प्रांतीय कार्य-क्षेत्र के अंतर्गत है, आर्थिक सहायता देना संघ सरकार के लिये जरूरी होगा; अत: यह आवश्यक है। सारे देश की तरक्की के ख्याल से संघ-सरकार को यह अधि कार मिलना बहुत जरूरी है।

***अध्यक्ष:** श्री अमियकुमार दास ने एक संशोधन की सूचना दी है।

***श्री अमिय कुमार दास** (आसाम: जनरल): श्रीमान्, मेरे नाम में जो संशोधन है, उसे मैं पेश नहीं करता हूं। मेरी दिलचस्पी खंड 2 से है, जिस पर वाद-विवाद अगले समय के लिए स्थगित कर दिया गया है। हमें विश्वास दिलाया गया है

[श्री अमिय कुमार दास]

कि विशेषज्ञों की समिति इस सारी समस्या की जांच पड़ताल करेगी। मुझे आशा और विश्वास है कि इस समिति से हमारे प्रांत को अवश्य बहुत कुछ प्राप्त होगा। सब संशोधनों के प्रस्तावित करने के पश्चात् मैं खंड 3 के विषय में सामान्य रूप से कुछ विचार प्रकट करूंगा, यदि आप मुझे आज्ञा दें।

***अध्यक्ष:** हां, हम पहले खंड 3 और उसके संशोधनों को लेंगे। यदि आप वाद-विवाद में भाग लेना चाहते हैं, तो आप ऐसा पीछे कर सकते हैं।

(सर्वश्री एच.वी. पातस्कर, टी.ए. रामालिंगम चेट्टियर, एच.जे. खांडेकर और माननीय जे.जे.एम. निकोल्सराय ने अपने संशोधन नम्बर 375, 376, 377 जो मुख्य सूची में हैं और नम्बर 23 को जो पूरक सूची 1 में है, नहीं पेश किए।)

जहां तक मुझे मालूम है खंड 3 के सम्बन्ध में और कोई संशोधन नहीं है। खंड और संशोधनों पर अब वाद-विवाद हो सकता है।

***श्री बी. दास** (उड़ीसा: जनरल): श्रीमान्, मैं सर एन. गोपालस्वामी आयंगर से सहमत हूं कि यह संघ-विधान का जो अध्याय हमारे सामने रखा गया है वह बहुत ही महत्वपूर्ण अध्याय है। श्रीमान्, मौलिक अधिकारों में हमने अब तक इस बात को सुनिश्चित नहीं किया है कि सबको सामाजिक सुरक्षा प्राप्त होगी। सामाजिक सुरक्षा का अर्थ सबके लिए सामाजिक न्याय है और इसमें सबके लिये जीवन निर्वाह का एक निश्चित स्तर होना चाहिये। इसमें केवल जनता का स्वास्थ्य और सुरक्षा ही सुनिश्चित नहीं होनी चाहिये, परन्तु सबके लिये कम से कम शिक्षा भी निश्चित होनी चाहिये। श्रीमान्, दुर्भाग्य से हमारे ऊपर विदेशीय शासन था जो अंग्रेजी प्रभुत्व के लिये स्थापित था। इसकी आर्थिक नीति यही थी कि भारत और एशिया दोनों में अंग्रेजी प्रभुत्व और अंग्रेजी साम्राज्य को सुरक्षित करने के लिये यह जो कुछ भी ले सकता था, लेवे। इसने प्रांतों को कुछ नहीं दिया। यदि उसने उड़ीसा या आसाम जैसे अधिक निर्धन प्रान्तों को कुछ दिया भी तो वह भरण-पोषण के लिये ही था, अधिक नहीं। अंग्रेजों ने जो भारत को प्राप्त किया वह केवल अंग्रेज़ी तिजारत और व्यापार को बढ़ाने के लिये। केवल कलकत्ता, बम्बई, मद्रास और कराची जैसे बन्दरगाहों में उन्नति और सम्पति थी। सारा यातायात इन्हीं बन्दरगाहों से होता था, इसीलिये ये प्रांत सम्पन्न हो गये। वह प्रान्त जो पीछे आये अर्थात् मेरा उड़ीसा का प्रान्त या आसाम वह परिस्थिति के शिकार बन गये। उनकी वही

दशा हुई जो एक निर्धन मनुष्य के घर में बालकों की होती है, जो सदा जन्मा करते हैं और उनको माता-पिता नहीं चाहते, क्योंकि वह उनको जीवन में भली प्रकार सुसज्जित नहीं कर सकते और न उनको पर्याप्त भोजन या शिक्षा दे सकते हैं।

इस सभा में मैं यह सुनते-सुनते थक गया हूं कि कुछ बातों में हम भारत सरकार के 1935 के एक्ट का अनुसरण करते हैं। हममें से जिन्होंने उस एक्ट के निर्माण का विरोध किया और हममें से जिन्होंने क्रमशः यह जान लिया कि अंग्रेज किस प्रकार अब हमारा गला घोटने में लगे हैं, और यह अंग्रेजी स्वेच्छाचारिणी सरकार किस प्रकार इस एक्ट के बल पर चिरस्थायी बनाई जा रही थी, वह यह सुनकर लज्जित और अपमानित बोध करते हैं कि आज जब हम स्वतंत्र भारत या (औपनिवेशिक) भारत के निकट पंद्रह दिनों में पहुंच रहे हैं तो हम भारत के लिए ऐसा विधान बनाने का यत्न कर रहे हैं, जो उस एक्ट के अनुसार होगा जिसने चिरकाल तक भारत को जकड़े रखा और जिसने 1935 से 1944 तक भारत में स्वाधीन सरकार की स्थापना को रोके रखा। श्रीमान्, वह थोड़े से सेक्शन जो हम गवर्नमेंट आफ इन्डिया के एक्ट में पाते हैं और जो आर्थिक प्रबन्ध उधार, लेन-देन और सहायतार्थ धन प्रदान करने के विषय में हैं, यह सब एक्ट में इस प्रयोजन से नहीं रखे गये कि उन प्रांतो की जनता को जिनका अकस्मात प्रादुर्भाव हुआ हो, सामाजिक सुरक्षा और सामाजिक न्याय प्राप्त हो। हमने देखा है कि 1939 के द्वितीय संग्राम के समय इन सेक्शनों का किस तरह उपहास किया गया था। एक खास सेक्शन 126(ए) जो 1939 में पास हुआ था उसके द्वारा सारे प्रांत के साधन अधिकृत कर लिए गए थे और समस्त भारत के लोग अंग्रेजों के दास और दासी बना दिये गये थे। और यह इसलिए कि भारत के सिपाही इस युद्ध में लड़ें जिससे अंग्रेजों की सहायता हो और विजय प्राप्त हो, चाहे भारत की कितनी भी हानि हो। हम सब जानते हैं, जो हुआ। तकरीबन 5,000 करोड़ रुपये का माल भारत से इंगलैंड और उसके साथी देशों को लड़ाई से पहले के दर के अनुसार भेजा गया था, इसी प्रकार भारत के खाद्य-पदार्थ लूटे गये थे, जिसका यह फल हुआ कि पचास या पिचहत्तर लाख स्त्री और पुरुष दुर्भिक्ष और भूख के कारण बंगाल में मृत्यु को प्राप्त हुए। दूसरा फल पदार्थों का मूल्य बढ़ना था, यह सामाजिक सुव्यवस्था और सामाजिक न्याय था, जो हमें मिला। श्रीमान्, मुझको यह बात दुख देती है कि संघ के विधान की भूमिका में यह स्पष्ट रूप से नहीं कहा गया है कि विधान का प्रयोजन जनता को सुख और शांति देना है और भारत निवासियों को धन-धान्य से युक्त करना है। इन बातों के विषय में

[श्री बी. दास]

अब तक कुछ कहा नहीं गया है, परन्तु मुझे आशा और विश्वास है कि इनके विषय में ठीक-ठीक बताया जाएगा। मेरा ख्याल है कि यह निर्दिष्ट कर देना चाहिये कि राज्य का मुख्य कर्तव्य यह है कि वह जनता के कुशल-मंगल की ओर ध्यान दे, न कि यह केवल शासन करे; जैसा कि अंग्रेजी सरकार ने इतने समय किया और भारत को अपने स्वार्थ-साधन का विषय बनाया और भारत पर मृत्यु और आपत्ति का पहाड़ तोड़ा। इस कारण मैं, श्रीमान्, सर गोपालस्वामी आयंगर से यह सुनकर प्रसन्न हूं कि आर्थिक विषयों पर जांच-पड़ताल करने वाली समिति नियत की जायेगी। परन्तु मुझे आशा है कि ऐसी समिति में केवल प्रसिद्ध वकील ही नहीं होंगे, परन्तु अर्थ शास्त्रज्ञ भी होंगे, जो यह निर्दिष्ट कर सकें कि सामाजिक जीवन का निम्नतम स्तर क्या होगा जिसे भारत की वर्तमान भार से कुल आर्थिक स्थिति उसको प्रदान कर सके। भाग 5 में हमने एक प्रबल केन्द्र के लिए व्यवस्था की है। परन्तु यह केवल केन्द्र का ही धर्म है कि वह शासन सम्बन्धी कार्य और कानून-निर्माण कार्य अपने हाथ में रखे। मैं यह चाहता हूं कि संघ-अधिकार-समिति में बड़े-बड़े अर्थ शास्त्रज्ञ भी हों। मुझे मालूम है कि मेरे मित्र पं. गोविन्दवल्लभ पंत उस समिति में थे और वह नि:सन्देह आर्थिक विषयों के पूर्ण पंडित हैं। परन्तु अच्छा होता यदि ऐसे लोग और भी होते। सामाजिक सुरक्षा और सामाजिक न्याय ही है जो हम चाहते हैं। शासन तो बेशक चल ही रहा है। मुझे यह कहने में दुख हुआ है, परन्तु मैं इस निश्चय पर पहुंचा हूं कि संघ-विधान ने शासन के भार को जो पहले के एक्ट में था, हलका नहीं किया है। नि:सन्देह संघ-विधान का अन्तिम बिल वह हमारे सामने पेश करेंगे और हम अक्टूबर में उनको जांचेंगे। परन्तु जो भाषण हमारे नेताओं ने दिए हैं और जिनको हमने इस सभा में सुना है, उनसे यही मालूम होता कि वह अधिकार चाहते हैं—शासन के अधिकार, कानूनी अधिकार, इत्यादि। अधिकार तो देश में शांति और सुख स्थापित करके लाखों को सुखी और शान्त करने का केवल साधन है। संघ-विधान का आर्थिक विषयों से सम्बन्ध रखने वाला अध्याय ही बतायेगा, इन लोगों का असल में मतलब क्या है। क्या वह सामाजिक न्याय स्थापित करना चाहते हैं, या वे स्वेच्छाचारी सरकार बनाना चाहते हैं, जिसमें राजनैतिक प्रभुत्व ही प्रधान होगा। जिनके हाथ में अधिकार हैं चाहे वह मेरे भाई हो या भतीजे, वे अपने अधिकार को उसी प्रकार काम में लायेंगे जिस प्रकार अंग्रेज लाते थे। इसका कारण यही है कि हममें से बहुत से लोग अंग्रेजी परम्परा पर चलते-चलते उमर गवां चुके हैं। श्रीमान्, एकाएक उस परम्परा को त्यागना और ऐसे लोकतांत्रिक सिद्धांतो का अपनाना जरा कठिन है, जिससे लाखों जनों का हम सामाजिक हित कर सकें और उनके लिए सामाजिक सुव्यवस्था

स्थापित कर सकें। इसलिये मैं संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट का स्वागत करता हूं; जिस पर अगस्त की बैठक में तर्क-वितर्क होगा। मुझे मालूम हुआ है कि संघ-विधान-समिति के सदस्य इससे भी एक कदम आगे बढ़ गये हैं। वहां वे कहते हैं.....

(हस्तक्षेप)

***अध्यक्ष:** मैं माननीय सदस्य को रोकना नहीं चाहता, परन्तु यह ध्यान दिलाना चाहता हूं कि इस समय हम खंड 3 पर वाद-विवाद कर रहे हैं। यह आर्थिक सहायता के सम्बन्ध में है।

***श्री बी. दास:** श्रीमान्, यही प्रश्न है जिस पर मैं बोल रहा हूं। इस खंड में प्रांतों में शिक्षा-दान देने का जिकर है। मैं भिक्षा दान नहीं चाहता। मैं केवल यही पढ़ रहा हूं जो संघ अधिकार समिति ने इस विषय में कहा है, क्योंकि यह उनकी भावना को बताता है। वे कहते हैं:

> **''यह बिलकुल स्पष्ट है कि यदि संघ उन करों की आय को जिसका हमने जिकर किया है अपने ही पास रखे, तो कभी-कभी इससे अंगों की आर्थिक सुव्यवस्था में बड़ी गडबड़ी आ जायेगी। इसलिये हम सिफारिश करते हैं कि इसके लिये ऐसी व्यवस्था हो कि इन करों की आय का कुछ भाग उस आधार पर दे दिया जाये जैसा संघ समय-समय पर निश्चय करे।''**

श्रीमान्, यह प्रदान या भिक्षा-दान या सहायता-दान, चाहे कोई भी देवे, चाहे वह अर्थ-मंत्री हो या राष्ट्रपति हो या संघ की सरकार हो, मुझे इससे प्रयोजन नहीं। मैं यह चाहता हूं कि विधान द्वारा ही इसकी व्यवस्था की जाए। मेरे मित्र सर गोपालस्वामी आयंगर ने हमसे कहा है कि विशेषज्ञों की एक समिति होगी। मैं यह चाहता हूं कि सहायता के लिये विधान में ही व्यवस्था हो जानी चाहिये। और यह अर्थ मंत्री या किसी और का भिक्षादान नहीं होना चाहिये, चाहे वह सर्वश्रेष्ठ विशेषज्ञ हो, चाहे निर्धन का सबसे बड़ा मित्र हो हमको इससे कोई प्रयोजन नहीं। यह प्रदान या सहायता हर तीसरे या पांचवें वर्ष नये सिरे से दी जानी चाहिये। यही सुझाव है जो मैं आगे रखता हूं। मैं चाहता हूं कि वह निश्चित करके बतायें कि वह करोड़ों के विशाल जनसमूह के लिये क्या करेंगे? प्रांतों में छोटी जमींदारियां और बड़ी जमींदारियां बन जायेंगी। मैं खंड तीन का समर्थन करता हूं, क्योंकि इससे मुझे अवसर मिलता है जिससे मैं अपना विचार सभा के आगे बताता हूं। और

[श्री बी. दास]

मुझे आशा है कि संघ-अधिकार-समिति इसको स्वीकार करेगी। मुझे विश्वास है कि विधान की धारायें भारत के हरएक नागरिक के साथ सामाजिक न्याय करेंगी और हर नागरिक के लिये एक निम्नतम जीवनस्तर की व्यवस्था करेगी और उसकी गारन्टी देगी।

***श्री अमिय कुमार दासः** श्रीमान्, अपने संशोधन को वापस लेते हुए मैंने आपको बता दिया है कि खण्ड 3 का समर्थन करते समय मैं कुछ विचार आपके आगे रखूंगा।

श्रीमान्, राजकीय आर्थिक सहायता का प्रश्न सारे संघों में एक बड़ी उलझन का प्रश्न है। परन्तु तो भी यह प्रश्न एक समझौते की भावना में सुलझाया जा रहा है। सारे संघों में विधान निर्माता समझौते की भावना से समस्या पर दृष्टि डालते हैं और यत्न करते हैं कि सब अंगों के साथ ठीक-ठीक न्याय हो। श्रीमान्, विधान के बनाने का काम हमको सोंपा गया है और आर्थिक सहायता का यह जटिल प्रश्न हमको हल करना है। यह समस्या और भी कठिन मालूम होती है, जब हम यह देखते हैं कि हमारी राष्ट्रीय आय बहुत ही कम है और भिन्न-भिन्न प्रान्तों में अनेक समस्यायें उपस्थित हैं और फिर प्रान्तों में अनेक ही पिछड़ी हुई जातियां और कबीलें हैं तथा और भी बहुत-सी जटिल समस्याएं हैं; परन्तु तब भी मुझे विश्वास है कि विशेषज्ञों की समिति, जो बनने वाली है, इस समस्या पर विचार करेगी और सभी अंगों के साथ समुचित न्याय का बर्ताव किया जाएगा।

इस विधान का मस्विदा बनाने में हमने भारतीय सरकार के एक्ट के वैधानिक ढांचे को ही प्रायः स्वीकार कर लिया है। और मेरे मन में संशय है कि हम उस आर्थिक प्रबन्ध को भी शायद स्वीकार कर लेंगे, जिसकी व्यवस्था भारतीय सरकार के एक्ट में की गई है।

श्रीमान्, मेरे लिये सभा को यह बताना जरूरी नहीं है कि जो आर्थिक व्यवस्था उस एक्ट में की गई थी वह एक भिन्न ही दृष्टिकोण से की गई थी। उस समय प्रान्तों में आय की कमी थी और औटो नैमियर कमेटी जो उस समय बनी उसको यह उपाय निकालना था कि बजट में समतुल्यता कैसे लाई जाए। उस समय सार्वजनिक, आर्थिक प्रबन्ध के विषय में जो विचार फैले हुए थे उनके होते हुए भी इस कमेटी ने बजट की समतुल्यता के प्रश्न को ग्रहण किया। इन थोड़े ही वर्षों में यह विचार बहुत ही बदल गये हैं और इनके स्थान में दूसरा ही आदर्श

आ गया है। वह आदर्श है कि सबको काम दिया जाए और जनता को अधिक से अधिक सुविधा पहुंचाई जाए। जो आर्थिक प्रबन्ध एक गतिहीन समाज के लिये बना था, वही अब गतिशील समाज के लिये रखा जा रहा है। श्रीमान्, अब हम एक ऐसी सरकार बना रहे हैं जो जनता की होगी और जनता द्वारा संचालित होगी। उसका क्या प्रयोजन और क्या उसकी उपयोगिता होगी, यदि वह शासन जनता के लिये अधिक से अधिक लाभदायक न हो सके?

श्रीमान्, यह अनुचित न होगा यदि मैं यहां कनैडा या आस्ट्रेलिया के विधानों की ओर संकेत करूं। उन विधानों के निर्माताओं ने एक बहुत ही उत्तम व्यवस्था बनाई है, जिसके द्वारा प्रान्तीय अंगों को अधिक अर्थ-सहायता देकर वह प्रान्तीय आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। श्रीमान्, मेरे आसाम के प्रान्त में विशेष समस्यायें हैं। वह प्रदेश कृषि-प्रधान है और उसमें शिल्पादि नहीं है। यह पिछड़ी हुई जातियों और कबीलों से भरा हुआ है और पिछड़े हुए लोगों की एक बड़ी संख्या इस प्रदेश में चाय के खेतों पर मजदूर के रूप में काम करने के लिए भेज दी गई है। इसके अतिरिक्त वहां पर बड़ी तेज नदियां हैं जो हरे-भरे खेतों का नाश कर देती हैं, भयंकर रोग भी होते हैं जो लोगों के सुख का नाश कर देते हैं; उन रोगों की रोकथाम का प्रबन्ध होना चाहिये। यह बड़ी समस्यायें हैं और जब तक हमारे पास एक उत्तम प्रकार का आर्थिक प्रबन्ध न हो, हम उनको दूर नहीं कर सकते। इसमें कोई संदेह नहीं कि हमारा देश पिछड़ा हुआ देश है, परन्तु मैं सभा का ध्यान इस ओर आकृष्ट करना चाहता हूं कि केन्द्रीय सरकार के खजाने में सबसे अधिक धन देने वालों में से हम भी एक हैं। चाय और सन पर निर्यात-महसूल की रकम और पेट्रोल पर चुंगी की रकम हम एक बड़ी संख्या में देते हैं। इस प्रकार केन्द्रीय सरकार के खजाने को हम सात करोड़ रुपये से कुछ कम नहीं देते हैं; परन्तु हाल के आर्थिक प्रबन्ध के अनुसार हमको केवल 25 लाख रुपये की एक छोटी-सी रकम मिलती है। मैं आशा करता हूं कि विशेषज्ञों की कमेटी जो इस प्रश्न पर सोच-विचार करेगी, हमको भविष्य में यथोचित भाग देगी।

इन थोड़े-से शब्दों के साथ मैं खंड 3 का समर्थन कर सकता हूं।

***श्री मोहम्मद शरीफ** (मैसूर): अध्यक्ष महोदय, जिन्होंने इस रिपोर्ट को तैयार किया है वे हमारे धन्यवाद के पात्र हैं; क्योंकि उन्होंने इसमें ऐसी व्यवस्थाओं का रखना वांछनीय समझा जिनसे उन लोगों की समुन्नति हो सके जो आज तरह-तरह की कठिनाइयों से जीवन यापन कर रहे हैं। जहां तक इस खंड का सम्बन्ध है इसका यही प्रयोजन है कि संघ की सरकार को यह अधिकार हो कि वह संघ की आय में से किसी भी अभिप्राय के लिये धन प्रदान करे। चाहे वह अभिप्राय

[श्री मोहम्मद शरीफ]

ऐसा नहीं हो जिसके लिये संघ की पार्लियामेंट कोई कानून बना सके। श्रीमान्, मुझे यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि हमारे सामने कितनी युद्धोतर योजनायें हैं जो जनता के आर्थिक, व्यापारिक और शिक्षा सम्बन्धी स्तर को ऊंचा करने के लिये बनाई गई हैं। ये योजनायें बिलकुल तैयार हैं, परंतु आवश्यकता इस बात की है कि इनको कार्यरूप में लाने के लिये धन मिले। जहां तक प्रांतों का सम्बन्ध है उनके पास साधन नहीं हैं कि जिनसे यह फौरन ही उनको अमल में लायें। निर्धनता की ओर देखें तो निर्धनता केवल उत्तर में ही व्याप्त नहीं है, परन्तु दक्षिण में भी है। अनेक भूख से मर रहे हैं और जनता की समुन्नति और उसकी शिक्षा सम्बन्धी उन्नति की ओर भी तुरन्त ही ध्यान देना चाहिये। जहां तक राष्ट्र-निर्माण सम्बन्धी कामों का सम्बन्ध है मैं नहीं ख्याल करता कि प्रांतों के पास धन है। यह देखना केन्द्रीय सरकार का धर्म है कि उनको धन दिया जाये और उस धन को वह निर्धन पुरुषों की आवश्यकताओं और प्रयोजनों पर और उनको सचेत और शिक्षित बनाने में खर्च करें। यही दो बातें हैं जिससे देश की उन्नति और वृद्धि होगी। यह बहुत ही आवश्यक है और रिपोर्ट के निर्माताओं ने यह बहुत ही अच्छा किया कि उन्होंने इस प्रश्न के विषय पर विचार किया और यह निश्चय कर लिया है कि संघ की आय में से प्रांतों को आवश्कीय धन मिलना चाहिये। इन शब्दों के साथ मैं इसका प्रसन्नता से समर्थन करता हूं।

***अध्यक्षः** मैं तो यह समझा था कि यह एक सीधा-सादा खंड है और इस पर इतने वाद-विवाद की आवश्यकता नहीं होगी। मैं सभा से पूछता हूं कि जब किसी ने विरोध नहीं किया तो क्या अभी वाद-विवाद की और आवश्यकता है?

***माननीय सदस्यगणः** नहीं, नहीं।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है कि ''संघ की सरकार को यह अधिकार होगा कि वह संघ की आय में से किसी भी प्रयोजन के लिये धन प्रदान करे; चाहे वह प्रयोजन ऐसा हो जिसके लिये संघ की पार्लियामेंट कोई कानून न बना सके।''

भाग 7 खंड 3 स्वीकार किया गया।

वाक्यांश 4

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** मैं वाक्यांश 4 को पेश करता हूं:

''अध्याय 7 भाग 7–संघ की आय की जमानत के ऊपर संघ के प्रयोजनों में से किसी एक प्रयोजन के लिये संघ की सरकार को ऐसे

प्रतिबन्धों और शर्तों के अधीन जो संघीय कानून द्वारा नियत किये जायें, ऋण लेने का अधिकार होगा।''

यह हर एक सरकार को करना पड़ता है। यदि उसे वह खर्चा पूरा करना पड़े जिसको वह अपनी चालू आय में से पूरा नहीं कर सकती, क्योंकि उसको उन बातों पर खर्च करना पड़ता है जिनका परिणाम स्थायी हुआ करता है। उदाहरण के लिए, उन्नति सम्बन्धी कामों के लिए खर्च करना। ऋण लेकर धन एकत्र करना सरकारी अर्थ प्रबन्ध में एक बड़ी आवश्यकीय बात है। विधान में यह खंड बहुत ही आवश्यक है।

***अध्यक्षः** क्या कोई संशोधन है, जिसकी किसी सदस्य ने सूचना दी हो?

***श्री एम.एस. अणे** (दक्षिणी रियासतें): मैं यह सुझाव रखता हूं कि ''संघ की आय की जमानत पर'' इन शब्दों के स्थान में ''संघ की सम्पत्ति और आय की जमानत पर'' ये शब्द जोड़े जायें।

***अध्यक्षः** श्री अणे का सुझाव है कि ''संघ की सम्पत्ति और आय की जमानत पर'' शब्द रखे जायें।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** जब हम मस्विदे पर विचार करेंगे तो इसका ध्यान रखेंगे। मैं नहीं ख्याल करता कि यह आवश्यक है।

***अध्यक्षः** क्या इस वाक्यांश के सम्बन्ध में कोई संशोधन है?

***श्री बी. दासः** (उड़ीसाः जनरल): मेरा एक संशोधन है। यह संशोधन नम्बर 1 की पूरक सूची में 24वां है।

***अध्यक्षः** मेरी समझ में यह एक नया ही खण्ड है। इस खण्ड से इसका सम्बन्ध नहीं है। खण्ड यह है:–

''संघ की आय की जमानत पर संघ के प्रयोजनों में से किसी एक प्रयोजन के लिये संघ की सरकार को ऐसे प्रतिबंधों और शर्तों के अधीन जो संघीय कानून द्वारा नियत किये जायें, ऋण लेने का अधिकार होगा।''

भाग 7 वाक्यांश 4 स्वीकार किया गया।

वाक्यांश 5

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्, मैं निम्नलिखित खण्ड उपस्थित करता हूं:

''संघ की सरकार को ऐसे प्रतिबंधों और शर्तों के अधीन जिसे यह नियत करे, संघ के किसी अंग को ऋण देने का या किसी अंग द्वारा लिए हुए ऋण की जमानत देने का अधिकार होगा।''

यह भी एक सीधा और आवश्यक खण्ड है। अंग की सरकारें अंग का खर्चा पूरा करें और कर्जा देने के लिये समर्थ रहें, इन बातों का उत्तरदायित्व संघ की सरकार पर होगा। यदि उनको कर्जा लेने की जरूरत हो तो संघ की सरकार या तो उनको धन कर्ज देगी या उस कर्जे का जिम्मा लेगी, जो अंग इकट्ठा करेगा।

(फैहरिस्त 2 के संशोधन नं. 378 और 379 पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्षः** इसके सम्बन्ध में कोई संशोधन नहीं है।

खण्ड यह है:

''संघ की सरकार को प्रतिबंधों और शर्तों के अधीन जिसे यह नियत करे संघ के किसी अंग का ऋण देने का या किसी अंग द्वारा लिए हुए ऋण की जमानत देने का अधिकार होगा।''

भाग 7 खण्ड 5 स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** मुझे इस भाग में कुछ जोड़ने के लिये एक संशोधन की सूचना मिली है।

***श्री बी. दासः** श्रीमान्, मैं उसे पेश नहीं करता हूं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रासः जनरल): मैं भाग 7 (क) को पेश नहीं कर रहा हूं, किन्तु 7 (ख) को पेश कर रहा हूं; इस कारण मैं चाहता हूं कि भाग 7 (ख) को 7 (क) बना दिया जाये।

मान्यवर मैं यह पेश करता हूं कि:

''संघीय कानून द्वारा निर्धारित विधि के अनुसार एक अंतर्प्रादेशिक कमीशन का निर्माण किया जायेगा और उसको न्याय तथा शासन प्रबंध

सम्बन्धी ऐसे अधिकार प्राप्त होंगे जो संघीय कानून द्वारा, उस विधान के व्यवसाय एवं वाणिज्य सम्बन्धी आदेशों की रक्षा और उनको कार्यान्वित करने के लिये तथा आमतौर पर उसी तरह के मामलों का फैसला करने के लिए जो राष्ट्रपति द्वारा समय-समय पर उसके सामने रखे जायें, नियत किये जायेंगे।''

इस संशोधन को पेश करने का उद्देश्य यह है कि तिजारत सम्बन्धी नियमों के विषय में इस विधान में हमें केवल एक ही जिक्र मिलता है और वह मूल अधिकारों में खण्ड 10 में जिसे इस सभा ने पिछले अधिवेशन में ही स्वीकार कर लिया था। खण्ड 10 के अनुसार संघ के नियमों की सीमा के अन्दर तिजारत और व्यापार करने की और संघ के अंगों और जन-साधारण के बीच पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करने की पूर्ण स्वतंत्रता होगी।

मैंने संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट में यह देखा कि अन्य देशों के साथ तिजारत व व्यापार का विषय संघीय सूची के मद 17 तथा प्रान्तीय सूची संख्या 2 के मद 26 में आया है। वास्तव में यह दोनों विषय 1935 के भारतीय विधान कानून की सूची 7, तालिका 1 के मद 19 से, तथा उसी सूची की तालिका 2 के मद 26 से मिलते हैं यहां शब्दों में कुछ परिवर्तन कर दिया गया है, परन्तु उनका अर्थ प्रायः एक ही है। किन्तु मुझे इसमें एक त्रुटि प्रतीत होती है। मैं यह देखता हूं कि इस विधान में गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट की धारा 297 के समान कोई व्यवस्था नहीं है जिससे अन्तर्प्रान्तीय व्यापार पर रोक लगाने के लिये कानून बनाने की मनाही हो जाये। मुझे पूर्ण निश्चय है कि सभा के सदस्य 1935 के एक्ट की इस धारा से पूर्णतया परिचित होंगे और इससे सम्बन्ध रखने वाले विषयों से भी वे परिचित होंगे। इस कारण मुझे कुछ आश्चर्य हुआ है कि इस प्रकार की कोई भी धारा इस विधान में नहीं रखी गई। ऐसा प्रतीत होता है कि संघ-विधान बनाने वालों ने इस विषय पर संसार के अन्य संघ-विधानों की प्रथा का अनुसरण किया है। श्रीमान्, जहां तक अमरीका का सम्बन्ध है, वहां पर विधान की धारा 8 की दफा 1 (Article 1) के अनुसार कांग्रेस को यह भी अधिकार है कि वह अपने वैदेशिक व्यापार या अन्तर्प्रादेशिक व्यापार सम्बन्धी प्रश्नों का नियमन कर सकती है। और उसी के आधार पर अमरीका में बहुत से कानूनी फैसले हुए हैं और इसी का यह परिणाम है कि अमरीका में भिन्न प्रकार की व्यापारिक कार्यवाहियों के विषय में नियम बनाने वाली कई संस्थाये बन गई हैं। मैं नहीं समझता हूं कि हम लोगों का राज्य-संघ जिसे हम अपने लिये

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

बनाने जा रहे हैं, वह इन सभी आवश्यक विषयों पर इतना स्पष्ट रह सकता है जितना कि अमरीकन विधान है। कारण यह है कि अमरीकन विधान में राष्ट्रपति प्रधान है और उसमें पहल यानी शुरू करने का हक एक ही मनुष्य अर्थात् राष्ट्रपति के हाथों में रहता है। परन्तु हमारा विधान संसदात्मक होगा जिसमें पहल किसी एक मनुष्य के पास नहीं होगी। इस कारण इस विषय में हमें कनाडा और आस्ट्रेलिया जैसे अन्य संघ-विधानों का उदाहरण लेना चाहिये।

जहां तक कनाडा का सम्बन्ध है, व्यापार सम्बन्धी नियमन का स्पष्ट उल्लेख अधिकार-विभाजन के प्रसंग में उस देश के विधान की धारा 91 में विषय नं. 2 में है। इस कारण जो वैधानिक स्थिति हमारी है उसका उदाहरण और कहीं नहीं मिलता। आस्ट्रेलियन विधान भी वास्तव में व्यापार सम्बन्धी विषयों पर कुछ ऐसा ही है जैसा कि हमें अपना विधान बनाना है। आस्ट्रेलिया के विधान की धारा 51 में देश के आन्तरिक व्यापार का उल्लेख है। परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि अमेरिका के अनुभव से लाभ उठाकर उन्होंने इतनी विद्वता दिखाई कि व्यापार सम्बन्धी नियमों के विषय में कुछ और धारायें उन्होंने अपने विधान में बढ़ा दी हैं। यह धारायें 101, 102, 103 और 104 हैं, और मैं इस समय धारा 101 की ओर संकेत कर रहा हूं। मेरा संशोधन बहुत-कुछ इस धारा 101 की नकल है जिसके अनुसार व्यापार सम्बन्धी विषयों पर फैसला करने के लिए और विधान में रखी हुई योजनाओं के अमल में लाने के लिये एक अन्तर्प्रादेशिक कमीशन बनाया जा सकता है।

श्रीमान्, सम्भव है, यह कहा जाये कि मेरे इस संशोधन में उपयुक्त शब्दों का प्रयोग नहीं किया गया है। वास्तव में मैं शब्दों के प्रयोग में इस धारा के आस्ट्रेलिया के विधान से भी कुछ आगे चला गया हूं, क्योंकि मैंने यहां निम्नलिखित शब्द और बढ़ा दिये हैं:

''तथा आमतौर पर उसी तरह के मामलों का फैसला करने के लिये जो राष्ट्रपति द्वारा समय-समय पर उसके सामने रखे जायें।'' मेरे ऐसा करने का कारण यह है कि भारतीय एक्ट 1935, की धारा 135 में ऐसी व्यवस्था रखी गई है जिसके द्वारा गवर्नर-जनरल एक ऐसी प्रांतीय सभा बना सकता है जहां पर इस प्रकार के विषयों पर पूरी तरह से बहस हो जाये और विधान में जो कोई त्रुटियां या विवादग्रस्त बातें हों वह प्रांतों के सदस्य पारस्परिक वाद-विवाद से ठीक कर लें। मुझे प्रतीत

होता है कि जिस विधान पर हम सोच-विचार कर रहे हैं उसमें इस प्रकार की किसी योजना का कोई प्रबन्ध नहीं किया गया है। इस कारण मैंने यह सोचा कि मेरा संशोधन आस्ट्रेलिया के विधान की धारा 101 से अधिक व्यापक होना चाहिये और राष्ट्रपति को इस अन्तर्प्रादेशिक कमीशन के सम्मुख और विषय रखने का भी अधिकार होना चाहिये।

श्रीमान्, सम्भव है कि यह कहा जाये कि इस प्रकार का उल्लेख कोई विशेष लाभदायक नहीं होगा। इस अन्तर्प्रादेशिक कमीशन के क्या अधिकार होंगे, यह मैं संघीय कानून पर छोड़ता हूं। मैंने आस्ट्रेलिया के विधान की धारा 103 की नकल नहीं की है, जिसमें यह कहा गया है कि सदस्य इतने हों और उनकी इतनी योग्यता हो इत्यादि, इत्यादि। यह सब विषय ऐसे हैं, जिन पर विस्तारपूर्वक उल्लेख उस समय किया जा सकता है जब कि विधान जारी हो जाये और उसके लिए संघ को कानून बनाने की आवश्यकता पड़े। मैं जो चाहता हूं वह यह है कि इस अन्तर्प्रादेशिक कमीशन के अधिकारों को बढ़ाने की गुंजाइश होनी चाहिए। यह प्रश्न कि कमीशन को केवल वही विषय दिये जायें जो व्यापार से सम्बन्ध रखते हैं या यह कि वह ऐसी संस्था बने जो अंगों की आर्थिक कार्यवाहियों में सामंजस्य लाए और उनके पारस्परिक झगड़ों को दूर करे, एक ऐसा विषय है जो विधान बनाने वालों पर और संघीय कानून जो आगे चल कर बनेगा उन पर छोड़ दिये जायें। मैं आशा करता हूं कि प्रस्तावक मेरे संशोधन को स्वीकार कर लेंगे।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** आप ही तो प्रस्तावक हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** मेरा अभिप्राय संघ-विधान-समिति की रिपोर्ट की योजनाओं के प्रस्तावक से था। मैं उन सब परिवर्तनों को मानने के लिये तैयार हूं जो मस्विदा बनाने वाले मेरे संशोधन के शब्दों में करना आवश्यक समझें। मैं अपने संशोधन को सभा की स्वीकृति के लिए उसके सामने रखता हूं।

***श्री के. सन्तानम्ः** श्रीमान्, मैं उस संशोधन का समर्थन करने के लिये खड़ा हुआ हूं जो कि मेरे मित्र श्री टी. टी. कृष्णमाचारी ने प्रस्तावित किया है। सभी संघ-विधानों में सदैव एक विरोधात्मक बात रहती है। एक तरफ तो एकता की आवश्यकता रहती है, दूसरी ओर स्थानीय स्वातंत्र्य आवश्यक होता है। कुछ विषयों पर यह ऐक्य संघ कानून द्वारा तथा संघ की शासन-व्यवस्था द्वारा प्राप्त किया जाता है; किन्तु बहुत से विषयों में ऐसा करना संभव नहीं है। इस कारण कुछ ऐसी

[श्री के. सन्तानम्]

और भी संस्थाएं बनानी पड़ेंगी जो संघ द्वारा न बनी हो। श्री टी. टी. कृष्णमाचारी के संशोधन में बहुत ही कम व्यापकता है। मैं आशा करता हूं कि समय आने पर हम उसके विस्तार को बढ़ा सकेंगे। हमको केवल यही एक कमीशन ही नहीं बनाना है, किन्तु अंगों में स्वेच्छापूर्ण सहयोग कायम करने के लिए और भी कमीशन बनाने पड़ेंगे। उदाहरण के लिए बिक्री-कर को लीजिये। यह सब प्रांतीय कर हैं। मैं यह आशा करता हूं कि आगामी वर्षों में यह कर अंगों के लिए आय का एक बहुत बड़ा साधन होगा, परन्तु जब तक अंग स्वेच्छा से परस्पर मिलजुल कर काम नहीं करेंगे और कर लगाने के विषय में एक ही प्रकार से नहीं चलेंगे तो यह सम्भव है कि व्यापार एक प्रदेश से दूसरे में जाता रहे और इससे अंगों की स्वाभाविक उन्नति में बाधा हो। कुछ दशाओं में ऐसा हो सकता है कि अंगों के लिए यह आवश्यक हो जाये कि उन्हें अपने प्रांतीय करों के जमा करने और बांटने का काम संघ को देना पड़े। इस कारण यही श्रेयस्कर है कि अंग स्वेच्छा से परस्पर सहयोग दें, और सहयोग देने के लिये एक संस्था बनायें और इन मामलों में एक निश्चित स्तर और पद्धति निर्धारित करें। पर उन्हें यह स्वतंत्रता रहे कि स्थान-भेद से जैसा आवश्यक होवे, उसमें परिवर्तन कर सकें। मेरे इस संशोधन के समर्थन करने का बड़ा कारण यह है कि मैं इसे अन्तर्प्रान्तीय सहयोग का एक आदर्श समझता हूं। चूंकि यह नियम विधान में आ जायेगा, यह एक उदाहरण बन जायेगा जिससे अंगों को दूसरे अन्य कार्यों में परस्पर सहयोग देने का एक तरीका मिल जायेगा; विशेषकर कृषि, नहर आदि मामलों में ऐसे कमीशन बड़े लाभप्रद होंगे। इस कारण मैं यह सुझाव दूंगा कि इससे पहले कि वह विधान के मस्विदे में रखा जाये, एक विशेष समिति द्वारा उस पर विचार हो और उसके विस्तार की छानबीन हो। यह कमीशन किस प्रकार बनाये जायेंगे, वह व्यवस्थापिका सभा द्वारा चुने जायेंगे या अंगों द्वारा मनोनीत किये जायेंगे; यह सब ऐसे विषय हैं जिन पर बहुत ध्यान देने की आवश्यकता है। मैं आशा करता हूं कि तत्सम्बन्धी योजनाओं को प्रान्तीय सरकारों के पास भेजने का यथोचित प्रबन्ध किया जायेगा और प्रान्तों के स्वीकार कर लेने पर ही इन्हें विधान में रखा जायेगा।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इस प्रस्ताव को प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करता हूं। यह बहुत आवश्यक है, परन्तु मैं यह अवश्य अनुभव करता हूं कि इसके शब्द जरा संकीर्ण हैं। ऐसे अन्तर्प्रादेशिक

कमीशन के लिये यह भी आवश्यक है कि वह देश की आर्थिक दशा का भी अनुसंधान करे और मैं यह सुझाऊंगा कि 'व्यापार', 'वाणिज्य' शब्द के अतिरिक्त यहां शब्द 'आर्थिक' भी होना चाहिये। भविष्य के विधान में धन सम्बन्धी प्रश्न बड़े महत्व का होगा और जैसा कि एक दूसरे खण्ड के सम्बन्ध में कुछ ही मिनट हुए श्री बी. दास ने कहा है, राष्ट्र निर्माण के कार्य के लिये बहुत धन की आवश्यकता होगी जिसे कि संघ-सरकार सहायता के रूप में प्रान्तों को देगी। यदि हमारे पास इस सहायता के रूप में देने को धन न हो तो राष्ट्र-निर्माण का कार्यक्रम पूरा करना सम्भव नहीं है। श्रीमान्, यह हमारी हार्दिक इच्छा रही है कि जब भारत स्वतंत्र हो तब राष्ट्र-निर्माण के कार्यक्रम को जल्दी पूरा कर लिया जाये और जब तक हम व्यापार सम्बन्धी कमीशन के नमूने पर एक आर्थिक कमीशन नहीं बनायेंगे, तब तक मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि हम अपने राष्ट्र-निर्माण सम्बन्धी कार्यक्रम को पूरा नहीं कर सकेंगे। यह संघ और प्रान्त दोनों के लिये बड़ी महत्वपूर्ण बात है। जब प्रान्तों की सरकार को आर्थिक सहायता देने का प्रश्न उठेगा तो संघ की सरकार कहेगी कि उसे भी धन की आवश्यकता है। इस कारण यह आवश्यक है कि विधान में ही इस बात को प्रबन्ध होना चाहिये, जिससे एक आर्थिक कमीशन बना दिया जाये जो राष्ट्र-निर्माण के कामों को पूरा करने के साधनों के विषय में सलाह दे। उदाहरण के लिये जन-स्वास्थ्य, सामाजिक सुरक्षा, सामाजिक सहयोग इन सब चीजों के लिये यह आवश्यक है कि उन पर तुरंत ही ध्यान दिया जाये। यदि हम इन सब बातों पर तुरंत ही ध्यान न देंगे तो मैं आपको विश्वास दिला सकता हूं कि चाहे हम कैसा भी विधान क्यों न बनायें जनता उससे संतुष्ट नहीं होगी। हमने अपने लक्ष्य सम्बन्धी प्रस्ताव में यह स्पष्ट रूप से बता दिया है कि हम समाजवादी राज्य-पद्धति चाहते हैं। श्रीमान्, यह एक उत्तम सुझाव है, किन्तु मैं माननीय प्रस्तावक से प्रार्थना करता हूं कि वह खण्ड के शब्दों में ''आर्थिक'' शब्द और जोड़ दें। हम वस्तुतः एक नई बात करना चाहते हैं। हम ऐसा काम करना चाहते हैं जिससे जनता को लाभ हो और इसके लिये यह बहुत आवश्यक है कि हम एक आर्थिक कमीशन बनायें। इस संशोधन का समर्थन करने के साथ साथ मैं प्रार्थना करता हूं कि ''आर्थिक'' शब्द उसमें और जोड़ दिया जाये।

***अध्यक्षः** क्या और भी कोई सदस्य इस विषय पर कुछ कहना चाहते हैं?

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्, मैं इस प्रस्ताव पर कुछ अधिक नहीं कहना चाहता हूं। उसका सिद्धान्त ठीक है। उसका कहना है कि विधान

[माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर]

में अन्तर्प्रादेशिक कमीशन बनाने के लिये व्यवस्था होनी चाहिये, ताकि वह तात्पर्य जिसे प्रस्तावक ने विस्तारपूर्वक इस सभा को बता दिया है, पूरा हो सके। मैं केवल यही कहूंगा कि इस संशोधन को स्वीकार करने से मैं उसकी शर्तों को मानने के लिये वचनबद्ध नहीं होता हूं और हमें उसकी भाषा, और सम्भव है उसके तात्पर्य को भी परिवर्तन करने की पूर्ण स्वतंत्रता होगी। संघ-विधान में उसको ध ारा या धाराओं के रूप में रखने के पहले हमको ऐसा करने का पूर्ण अधिकार होगा। मान्यवर, इन शब्दों के साथ मैं उसको स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्षः** अब मैं श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के संशोधन पर मत लूंगा।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** भाग 7 में सीधे शासित प्रदेशों का जो उल्लेख है, जो खण्ड में मैं पेश करना चाहता हूं, वह इस प्रकार है:

''(1) बतौर अंतर्कालीन व्यवस्था के चीफ कमिश्नरों के प्रान्तों का शासन केन्द्र द्वारा ही जारी होना चाहिए जैसा कि गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट में किया गया है। इसमें कोई परिवर्तन हो, इस प्रश्न पर बाद में विचार किया जायेगा और केन्द्र द्वारा शासित सभी प्रदेश को जिनमें अंडमान टापू और निकोबार टापू भी हैं, विधान में स्पष्ट उल्लेख होना चाहिये।''

''(2) कबाइली प्रदेशों के शासन के लिये विधान में उपयुक्त व्यवस्था होनी चाहिये।''

इसका पिछला भाग परामर्शदातृ समिति की रिपोर्ट पर निर्भर है। वह समिति जो कुछ भी सुझायेगी और जो कुछ यह सभा स्वीकार करेगी, वही नये विधान में रखा जायेगा।

जहां तक सीधे शासित प्रदेशों का सम्बन्ध है, समिति का यह सुझाव है कि इस समय जो प्रबन्ध है, वही जारी रह सकता है। और चीफ कमिश्नरों के प्रान्तों के शासन और विधान में कोई परिवर्तन हो, इस प्रश्न को संघ की भावी पार्लियामेन्ट पर छोड़ देना चाहिये।

***अध्यक्षः** इस खण्ड के सम्बन्ध में कुछ संशोधन हैं।

(श्री एच.जे. खान्डेकर ने अपना संशोधन नं. 380 पेश नहीं किया।)

***श्री गोकुलभाई डी. भट्टः** सभापतिजी, मेरा जिस मतलब का संशोधन है करीबन उसी मतलब का दूसरा सुधरा हुआ संशोधन आने वाला है। इसलिये मैं यह संशोधन नहीं रख रहा हूं।

श्री देशबन्धु गुप्तः सभापतिजी, जो संशोधन मैं पेश करना चाहता हूं वह इस प्रकार है:

''खण्ड 1 पर विचार स्थगित रखा जाये, और चीफ कमिश्नर वाले प्रान्तों की शासन पद्धति में समुचित वैधानिक सुधार लाने के लिये जिससे कि वह देश की परिवर्तित स्थितियों के अनुकूल हो जाये और स्वतंत्र भारत के प्रजातांत्रिक विधान में उन्हें उपयुक्त स्थान मिल सके, अध्यक्ष द्वारा मनोनीत सात सदस्यों की एक विशेष उप-समिति की सिफारिश, विधान-परिषद् के आगामी अधिवेशन के पहले की जाये।''

इस सम्बन्ध में मुझे केवल इतना ही निवेदन करना है कि यूनियन कांस्टीट्यूशन कमेटी ने जो सिफारिश की है, उसका अर्थ यह होता है कि कांस्टीटुयूएंट असेम्बली चीफ कमिश्नर प्रावेन्सेज के बारे में अभी कुछ नहीं करना चाहती। मैंने यूनियन कांस्टीट्यूशन कमेटी के मेम्बरों से, प्रौविन्शियल कांस्टीट्यूशन कमेटी के मेम्बरों से और दूसरे मेम्बरों से भी इस बारे में बातें कीं, जिससे मैं इस परिणाम पर पहुंचा। उनका मतलब यह नहीं है कि चीफ कमिश्नर प्रावेन्सेज जिनमें दिल्ली, अजमेर-मेरवाड़ा और कुर्ग, ये तीन बड़े प्रावेन्स शामिल हैं, इनमें जैसी आजकल यहां पर हुकूमत चल रही है उसी प्रकार आगे भी होती रहे। लेकिन उन्होंने सहूलियत के ख्याल से ऐसी सिफारिश की है। कुदरती तौर पर इन सूबों की आबादी की भी, जो कि अब तकरीबन 30 लाख होती है, ख्वाहिश है कि जब सारे मुल्क का विधान बन रहा है, सारे मुल्क का नया कान्स्टीट्यूशन तैयार हो रहा है, तो इन सूबों के लिये भी कान्स्टीट्यूशन बनना चाहिये। और आगे यहां पर किस प्रकार से शासन होगा और काम चलेगा, उसका साफ-साफ स्वरूप हमारे सामने आना चाहिये। इसी ख्याल को सामने रखकर मैं आपके सामने यह तरमीम रख रहा हूं।

मैं समझता हूं कि जिस प्रकार हमने यूनियन कान्स्टीट्यूशन कमेटी सेन्टर का कान्स्टीट्यूशन बनाने के लिये बनाई है और प्रौविन्शियल कान्स्टीट्यूशन कमेटी

[श्री देशबन्धु गुप्त]

प्रौवेन्सेज का कान्स्टीट्यूशन बनाने के लिए बनाई है। इसी प्रकार से यह जरूरी था कि चीफ कमिश्नर प्रोवेन्स के लिए भी, जिनकी संख्या और आबादी यद्यपि कम है; लेकिन उनका महत्व कम नहीं है, इसलिए जरूरी था कि उनके लिए एक कमेटी बनाई जाती। मुझे खुशी है कि यह तरमीम एक तरह से ऐग्रीड तरमीम है और मैं समझता हूं कि जब यह सब-कमेटी बनाई जायेगी तो वह इस मसले के सब पहलुओं पर गौर करेगी। चूंकि आपमें से बहुत से भाई इस लिहाज से देहली के बाशिन्दे हैं कि साल का बड़ा हिस्सा जहां गुजारते हैं। आप में अक्सर हमारे मेहमान हैं, अतः मैं समझता हूं कि देहली वालों की मुश्किलात जब आपके सामने आयेंगी तो यह कान्स्टीट्यूशन कमेटी सही तरीके से उन पर गौर कर सकेगी।

इसलिए मैं इस समय ज्यादा कहना नहीं चाहता। चीफ कमिश्नर प्रौवेन्स के लोगों को जिन मुश्किलात का सामना करना पड़ता है, उन्हें इस वक्त तक किसी प्रकार सैल्फ गवर्नमेन्ट से महरूम न रखा जाये। इस पर भी उन्होंने स्वाधीनता की लड़ाई में कितना बड़ा हिस्सा लिया। यह सब बातें कमेटी के सामने आयेंगी और मुझे आशा है कि वह ऐसे कान्स्टीट्यूशन को रिकमण्ड करेगी जो सारे हाउस को मंजूर होगा।

मैं हाउस का ज्यादा वक्त नहीं लेना चाहता। मुझे उम्मीद है कि यह तरमीम मंजूर की जायेगी। अगर यह तरमीम मंजूर हो जाती है तो और तरमीमें जिनका नोटिस हम लोगों की ओर से दिया गया है फिर उनके पेश करने का सवाल पैदा नहीं होता।

अध्यक्षः इस खण्ड को लेकर कोई और संशोधन नहीं है, किन्तु यदि श्री देशबन्धु गुप्त का संशोधन मान लिया जाये तो अन्य संशोधन पर विचार करने की आवश्यकता नहीं रहेगी।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** मैं उनके संशोधन को स्वीकार करता हूं, लेकिन मैं उप-समिति शब्द के स्थान में समिति कर दूंगा।

***अध्यक्षः** सर एन. गोपालस्वामी ने स्वीकार कर लिया है।

***श्री आर.के. सिधवाः** मैं इस प्रस्ताव के पक्ष में बोलने के लिये खड़ा हुआ हूं। मैं कोई भाषण नहीं देना चाहता, मैं तो केवल उन सदस्यों को, जो इस समिति

की सदस्यता करेंगे, यह बता देना चाहता हूं कि यह प्रश्न कितना महत्वपूर्ण है और इस कारण मैं समझता हूं कि इस समय इस विषय पर कुछ कहना समुचित नहीं होगा। देहली शहर में बहुत से ऐसी बातें हैं जिन पर कभी ध्यान ही नहीं दिया गया। यह कहा गया है कि देहली केन्द्रीय सरकार का स्थान है, इस कारण सरकार सारे भारत के ही विषयों पर ध्यान देती है और इस तरह उसने देहली शहर और प्रांत की बातों पर ध्यान नहीं दिया। उदाहरणतया देहली में लाने और ले जाने वाली जी. एन. आई. टी. नाम की एक कम्पनी है। लोग इस कम्पनी को बहुत बुरा-भला कहते हैं। एक तो इस कारण कि वह आने-जाने वाले लोगों की सुविधा का पूर्ण रूप से प्रबन्ध नहीं कर सकी और दूसरे उसके किराये बहुत अधिक हैं। यदि देहली की अपनी प्रान्तीय सरकार होती और यदि यह विषय उसके क्षेत्र में आता तो वह उस विषय पर तुरत ही ध्यान देती। इस प्रकार का लाइसेन्स स्थानीय सरकार ही देती है। यदि यहां भी एक अलग दायित्वपूर्ण शासन होता तो, या तो इसको राष्ट्रीय सर्विस बना दिया जाता, जैसा कि पंजाब सरकार ने किया और या इसी सर्विस को अच्छा कर दिया जाता। यह एक छोटी-सी बात प्रतीत होती है, यद्यपि एक साधारण व्यक्ति पर उसका असर पड़ता है। साधारण मनुष्य सरकार को इस विषय पर कुछ न करने का दोषी ठहरायेगा। उसके अतिरिक्त और भी विषय हैं, जैसे खेती-बाड़ी वाले स्थानों में पानी का प्रबन्ध। पी. डब्लू. डी. और संघ निषेध का प्रबन्ध वगैरह। यदि कोई पृथक प्रान्तीय विधान होता तो यह निश्चित है कि वह सरकार ऐसे विषयों पर विचार करती, चाहे देहली की जनसंख्या कुछ भी हो। चूंकि देहली राजधानी है, इस कारण अभी तक इस पर कोई विचार नहीं किया गया। मुझे ऐसा मालूम होता है चूंकि देहली भारत की राजधानी रही है, इसलिये यह शहर और आस-पास के गांव पर भूतकाल में कभी ध्यान नहीं दिया गया। इस कारण मैं इस प्रस्ताव का स्वागत करता हूं और मैं समिति के सदस्यों को बता देना चाहता हूं कि देहली में दायित्वपूर्ण सरकार हो जिससे देहली की जनता अपनी आपबीती सुना सके। इस दृष्टिकोण से मैं इस प्रस्ताव का हार्दिक स्वागत करता हूं। इसमें पहले ही बहुत विलंब हो चुका है। मैं यह कह देना चाहता हूं कि जब मैंने विधान में यह देखा कि देहली ज्यों का त्यों रहेगा और भविष्य के विधान में सम्भव है कि कमीशन बना दिया जाये, तो मैंने यह संशोधन रखा था कि आने वाले नये विधान में देहली की अपनी

[श्री आर.के. सिधवा]

व्यवस्थापिका होनी चाहिए और देहली शहर या प्रान्त की जनता को इसका मौका मिलना चाहिए कि वह अपने दुखों और संकटों को प्रकट कर सके।

मैं इस प्रस्ताव का हार्दिक समर्थन करता हूं।

***श्री सी.एम. पुनाका** (कुर्ग): अध्यक्ष महोदय, मैं सर गोपालस्वामी को अपने इस संशोधन को स्वीकार करने पर धन्यवाद देता हूं और ऐसा करते समय मैं सुझाव के रूप में कुछ बातें कहूंगा। पहले एक अवसर पर इसी सभा-भवन में मैंने यह सुझाया था कि चीफ कमिश्नरों के प्रांतों के विषय पर सोच-विचार करने के लिए एक समिति गठित की जाये। यह चीफ कमिश्नरों के प्रांतों का विषय इतना सरल नहीं है, जितना प्रतीत होता है। भिन्न-भिन्न प्रांतों की समस्याएं एक दूसरे से भिन्न-भिन्न हैं। यह बात 1919 और 1935 के विधान-कानून के बनने से पहले जो विधान सम्बन्धी जांच-पड़ताल हुई थी, उसकी रिपोर्टों से स्पष्ट हो जाती है। चीफ कमिश्नरों के प्रांतों की समस्या पर उपयुक्त रूप से 1919 और 1935 के विधान-कानूनों में ध्यान नहीं दिया गया और अभी तक यह समस्या हल नहीं हुई है। श्रीमान्, इस कारण मेरा विचार है कि 1935 के कानून के अन्दर, इनमें से प्रत्येक प्रांत की क्या दशा थी, इसका ठीक-ठीक पता लगाया जाये और उसी के अनुसार उपयुक्त योजनाएं सुझाई जायें। सम्भव है कि ऐसा करने में स्थानीय पूछताछ या कम से कम प्रश्नोत्तरों द्वारा (लोगों के) दृष्टिकोणों का पता लगाना आवश्यक हो।

जहां तक कुर्ग का सम्बन्ध है, मैंने एक पिछले अवसर पर यह बताया था कि कुर्ग की व्यवस्थापिका सभा में अपने यहां के चुनाव के समय मैंने निश्चित रूप से कहा था कि कुर्ग के राज्य-शासन में कोई बड़ा परिवर्तन करने से पहले जनता के मत का पता लगाया जायेगा। कुर्ग की अपनी समस्याएं हैं और उसके लिए एक पूरी छानबीन की आवश्यकता है। मेरे लिए यह बता देना अनुपयुक्त न होगा कि समिति को कुर्ग जाना चाहिए, जिससे कि उसे कुर्ग की व्यवस्थापिका सभा का अच्छा ज्ञान हो जाये। यह सभा पिछले 24 वर्षों से चल रही है और समिति के लिए यह मालूम करना कि एक शताब्दी के चौथाई भाग से यह किस प्रकार अपना काम कर रही है, अत्यन्त लाभदायक होगा। अन्त में मैं यह कहने के लिए आपकी आज्ञा चाहता हूं कि चूंकि इन प्रदेशों के निवासियों के लिए

यह एक अत्यन्त आवश्यक विषय है, इस कारण चीफ कमिश्नरों के प्रांतों के सदस्यों को इस समिति की कार्यवाही में शामिल करना चाहिए। मैं यह भी कहूंगा कि चूंकि समस्या जटिल है, इसलिए अपने विधान सम्बन्धी कानूनदाओं को भी, जिन्होंने इस संघ-विधान-रिपोर्ट को तैयार करने में इतना परिश्रम किया है, इस समिति में ले लेना चाहिए। यह समस्या ऐसी जटिल है कि इसकी सावधानी से छानबीन करनी चाहिए और इसे योग्य नेतृत्व मिलना चाहिए।

***पं. मुकुट बिहारीलाल भार्गव** (अजमेर-मेरवाड़ा): माननीय अध्यक्ष महोदय, मैं श्री गुप्ता के संशोधन का पूर्ण रूप से समर्थन करता हूं। यह बड़े अचरज की बात है कि संघ-विधान-समिति ने जिसे चीफ कमिश्नरों के प्रांतों पर ध्यान देने के लिए विशेष अधिकार दिए गए थे, इस सम्बन्ध में कोई बात नहीं सुझाई। उसने तो केवल समस्या को एक तरफ रख दिया और कहा कि शासन में परिवर्तन की समस्या पर आगे चलकर ध्यान दिया जायेगा। यह वास्तव में एक बड़े हर्ष की बात है कि इस खण्ड के प्रस्तावक ने इस संशोधन को स्वीकार कर लिया है और अब अध्यक्ष एक समिति बनायेंगे, जो चीफ कमिश्नरों के प्रांतों के विषय पर ध्यान देगी।

श्रीमान्, चीफ कमिश्नरों के प्रांत देश के भिन्न-भिन्न भागों में स्थित हैं और वे भिन्न प्रदेश एक से नहीं हैं। उनका अपना निजी ऐतिहासिक महत्व है। जहां तक मेरे प्रांत अजमेर-मेरवाड़ा का सम्बन्ध है, वह राजपूताने के बीचोंबीच स्थित है और बड़े महत्व का स्थान है। वास्तव में अपनी विशेष स्थिति के कारण अंग्रेजी शासन-काल में मेरा प्रांत सदा स्वेच्छाचारी शासन (autocratic) के अधीन रहा। इस शासन के परिवर्तन के लिए जितने प्रयत्न किए गए, वह सब निष्फल हुए। 1901 के मौर्ले-मिण्टो सुधारों से, 1919 के मोण्टेग्यू-चेम्सफोर्ड-सुधारों से और 1935 के विधान-कानून से वह स्वेच्छाचारी शासन, जो इस प्रांत और अन्य चीफ कमिश्नरों के प्रांतों में प्रचलित है, हमेशा अछूता रहा। श्रीमान्, वास्तव में तो संघ-विधान-समिति का यह कहना कि इस विषय को आगे चल कर लिया जाये, जनतंत्रीय भारतवर्ष के प्रजातंत्रीय विधान के विपरीत है। इस कारण यह उपयुक्त है कि जब संघ के अन्य प्रांतों में बड़े वैधानिक परिवर्तन हो रहे हैं, तब साथ ही साथ चीफ कमिश्नरों के प्रांतों का भी विधान जो स्वेच्छाचारी है, परिवर्तित कर दिया जाये और शेष भारत के अनुसार बना दिया जाये। मैं आशा करता हूं कि विशेष

[पं. मुकुट बिहारीलाल भार्गव]

उप-समिति (Special Sub-Committee) जो हम बनायेंगे वह चीफ कमिश्नरों के प्रत्येक प्रांत की समस्याओं पर ध्यान देगी और ऐसा विधान सुझायेगी कि जो पूर्ण रूप से प्रजातांत्रिक हो।

जहां तक अजमेर का सम्बन्ध है, मेरा यह कहना है कि वह एक ऐसा प्रांत है, जो इस योग्य है कि उसे पूरा बड़ा प्रांत बना दिया जाये। केवल इन बातों पर कि वह बहुत छोटा है, या उसके आर्थिक साधन कम हैं, अधिक ध्यान नहीं देना चाहिए और जनता को अपने विषय में फैसला करने का और अपने घर में मालिक बनने का पूर्ण अधिकार होना चाहिए। इस कारण मैं यह सुझाव दूंगा कि उप-समिति जो आप नियुक्त करेंगे, वह इस समस्या पर पूर्ण रूप से सब दृष्टिकोणों से ध्यान दे और चीफ कमिश्नरों के प्रांतों के प्रतिनिधियों को इस उप-समिति में उचित स्थान दिया जाये, हार्दिक समर्थन करता हूं। कम से कम इस उप-समिति को इन प्रांतों के प्रतिनिधियों को सुने बिना किसी नतीजे पर नहीं पहुंचना चाहिए। श्रीमान्, मैं आशा करता हूं कि सितम्बर के अन्त तक उप-समिति इस सभा के सामने ऐसा विधान रख देगी, जो पूर्ण रूप से प्रजातांत्रिक होगा और उसमें इन प्रांतों की जनता को आने वाली स्वतंत्रता का तथा भारतीय गणतंत्र की स्थापना की एक झलक मिलेगी। समिति को यह विषय इस तरह उठाकर नहीं रख देना चाहिए था, जिस तरह कि वह अब तक रखा गया था।

इन शब्दों के साथ मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री बी. दास:** श्रीमान्, मेरे मित्र श्री देशबन्धु गुप्ता ने जो प्रस्ताव पेश किया है, मैं उसका हार्दिक समर्थन करता हूं। एक ऐसी समिति होनी चाहिए कि जो इन चीफ कमिश्नरों के प्रांतों के शासन-स्तर को ऊंचा उठाये और ऐसा करे कि वहां भी जनता को हमारी तरह समान अधिकार प्राप्त हों। मैं समझता हूं कि ऐसा करने में कठिनाइयां होंगी। ये चीफ कमिश्नरों के प्रांत भारत में अंग्रेजी प्रभुत्व और अंग्रेजी स्वेच्छाचारी शासन को रखने के लिए बनाये गए थे। अन्तिम वक्ता ने, जो अजमेर-मेरवाड़ा की ओर से बोल रहे थे, कहा कि अजमेर-मेरवाड़ा अब तक पोलिटिकल डिपार्टमेण्ट का स्वर्ग था। यद्यपि पोलिटिकल डिपार्टमेण्ट को अब बन्द कर दिया गया है तब भी वह अभी तक पोलिटिकल डिपार्टमेण्ट के लिये स्वर्ग

के समान है और वहां जनता के प्रतिनिधियों के हाथ में वास्तव में कुछ भी नहीं है।

दिल्ली ने यह दिखा दिया कि अंग्रेजी स्वेच्छाचारी शासन, भारत की सरकार के सामने ही, चीफ कमिश्नर द्वारा जो चाहता है, करता है। अभी तक लगातार एक अंग्रेज ही चीफ कमिश्नर होता था और वह, केन्द्रीय धारा-सभा के (Central Assembly) जो इस भवन के एक भाग में है, बावजूद और केन्द्रीय धारा-सभा में दिल्ली के एकांकी प्रतिनिधि के बावजूद भी जो चाहता था, कर सकता था। दिल्ली का म्युनिस्पल शासन भी बड़ा पुराना है। वह खुशामदियों की एक जमात है। वह एक परामर्शदातृ-सभा (Advisory Council) को चुनती है, जो एक बड़े अचरज की बात है।

अब मैं पन्थ-पिपलोदा के विषय में कुछ कहूंगा। यह राजपूताने में है और इसकी जनसंख्या 15 हजार है। अब प्रश्न यह है कि जनता को प्रतिनिधित्व का अधिकार हो सकता है या नहीं। मैं समिति को यह सुझाऊंगा कि इसको अजमेर-मेरवाड़ा की सी समानता मिलनी चाहिए और उसे चीफ कमिश्नर के प्रांत का भाग बना देना चाहिए। वह प्रांत अब गवर्नर या डिप्टी गवर्नर का प्रांत बने।

जहां तक निकोबार (Nicobar) और अंडमान (Andaman) टापुओं का सम्बन्ध है, जिसके बारे में हम इतना सुनते हैं, वहां पर केवल कुछ भारतवासी, जो पहले बन्दी थे, रहते हैं। निकोबार टापुओं में कोई बीस हजार स्थानीय निवासी रहते हैं। वह बहुत प्राचीन निवासियों की तरह रहते हैं। अभी तक अण्डमान और निकोबार टापुओं का शासन एक चीफ कमिश्नर के हाथ में रहा है और यह चीफ कमिश्नर सदैव आसाम सिविल सर्विस का था। मैं यह सुझाना चाहता हूं कि वहां के लोग इतने पढ़े-लिखे नहीं हैं केवल कुछ अंग्रेज और एंग्लोइंडियन ही पढ़े-लिखे हैं, जो वहां जाकर व्यापार के कारण बस गए हैं। मैं यह चाहूंगा कि अंडमान और निकोबार टापुओं के प्रतिनिधि को आसाम के कानून बनाने वाली सभा में लेना चाहिए और निकोबार टापू के लोगों को कबायली (Tribal) लोगों की तरह समझना चाहिए और उसी के अनुसार उनका बचाव होना चाहिए। जहां तक मुझे मालूम है, कबायली प्रदेशों के लिए जो परादर्शदातृ-समिति बनी है वह न तो अभी तक निकोबार टापू गई है, और न उसने वहां के निवासियों के रहन-सहन के विषय में ज्ञान प्राप्त किया है।

[श्री बी. दास]

जहां तक कुर्ग का सम्बन्ध है, वह एक चीफ कमिश्नर का प्रांत है और वहां पर चीफ कमिश्नर ही सब कुछ है। चीफ कमिश्नर को ही स्वाधीनता है और वह एक स्वेच्छाचारी शासक है—यदि इसमें कोई अशुद्धि हो, तो श्री पुनाका उसे शुद्ध कर दें। कुर्ग के जमींदार, जो अधिकतर अंग्रेज हैं, समझते हैं कि वह बरतानियां का भाग है। यह सब बातें एक मूल विषय से सम्बन्ध रखती हैं और चूंकि हम सारे भारत के लिए विधान बना रहे हैं, इस कारण इन लोगों को भी हमारे समान अधिकार होने चाहिएं। ऐसा कैसे करना चाहिए, इसका फैसला समिति ही करेगी; किन्तु समिति को जरूर निकोबार टापू जाना चाहिए और वहां के निवासियों की समस्याओं को समझना चाहिए। इसी प्रकार मैं श्री पुनाका के इस सुझाव का भी समर्थन करूंगा कि समिति को स्थानीय प्रतिनिधियों से मिलकर काम करना चाहिए। इस समिति को यह भी चाहिए कि वह कुर्ग जाये। सम्भव है कि मेरे मित्र सर एन. गोपालस्वामी आयंगर के अतिरिक्त, जो शायद कभी कुर्ग छुट्टी पर गए हों, हममें से बहुत कम ऐसे होंगे, जिन्होंने कुर्ग के स्वेच्छाचारी शासन को देखा हो, या उसके विषय में कुछ सुना हो; किन्तु हममें से वह लोग जो जानते हैं कि पिछले चीफ कमिश्नर कैसे होते थे, समझ सकते हैं कि कुर्ग की जनता को कितना कुचला गया होगा और उनको कितना दबाकर रखा गया होगा।

पं. ठाकुरदास भार्गव (पूर्वी पंजाब: जनरल): जनाब प्रेसिडेंट साहब, इस प्रस्ताव के बारे में मैं एक खास नुक्ता निगाह से इस हाउस के सामने चन्द बातें अर्ज़ करना चाहता हूं। मुझे अजमेर-मेरवाड़ा और दूसरे चीफ कमिश्नर के प्रोविंसेज़ के लोगों से बड़ी हमदर्दी है। देहली के साथ खासतौर से ज्यादा हमदर्दी है क्योंकि देहली वाले और जिस खित्ते से मैं मेम्बर होकर आया हूं, उसके लोग आपस में हर तरह मिले जुले हैं। असलियत यह है कि देहली जो 1915 के पहले हिन्दुस्तान की राजधानी रही, इससे पेश्तर अम्बाला डिवीज़न का हिस्सा था और पंजाब का एक हिस्सा था और देहली की तहसीलों में बल्लभगढ़, सोनीपत और पलवल जो थे, वह अब रोहतक जिले के साथ शामिल हैं। और जो इलाका पूर्वी पंजाब के नाम से मशहूर है, उसका एक हिस्सा अब देहली के अन्दर जितने गांव शामिल हैं, उनका सूबा के लिहाज़ से, आर्थिक दृष्टि से, रहन-सहन के तरीके से, उनके रस्मोरिवाज से और हर स्टैंडर्ड से जो किसी को एक प्रदेश में शामिल होने के लिए जरूरी हैं—इन सब बातों के लिहाज़ से देहली का यह हिस्सा जो

चीफ कमिश्नर के प्रोविंस में शामिल है, और जो अम्बाला डिवीजन का बड़ा हिस्सा है बड़ी मुद्दत से कोशिश कर रहा है कि गवर्नर के प्रोविंस में शामिल हो जाये। अभी चन्द दिनों में सभा के सामने एक प्रस्ताव आने वाला है जिसके अन्दर प्रोविंसेज़ का जुबान और कल्चर के लिहाज से फिर से बंटवारा किये जाने की बात है। इससे पहले बहुत से मसले आ चुके हैं। अब यह एक और चीज है कि जिसको जीने-मरने का सवाल कहा जा सकता है। आज के दिन कितनी कांफ्रेंसें पंजाब और यू. पी. के हिस्सों में हो रही हैं, जिनकी मांग यह है कि समूचे का एक हिस्सा बनाकर एक प्रोविंस की हैसियत दे दी जाये, यानी अजमेर-मेरवाड़ा, देहली जो एक जुबान बोलते हैं और जिनका रहन-सहन एक सा है। मैं यह अर्ज करने आया हूं कि अगर इस प्रदेश को हमेशा के लिये ईस्ट पंजाब से जुदा करना है तो मैं इसकी मुखालिफत करने के लिये तैयार हूं। और मैं चाहता हूं कि हिन्दुस्तान की आजादी का बड़ा सवाल तय किया जाये जिसकी रूह से कुछ बड़े प्रोविंसेज बनेंगे। उस वक्त तक इस सवाल का आखिरी फैसला न किया जाना चाहिये। जहां तक चीफ कमिश्नर के प्रोविंसेज़ के बनाने का सवाल है, मैं इसका मुखालिफ नहीं हूं, मैं इतना अर्ज करूंगा कि इसे भी हुकूक मिलने चाहिएं जब बाकी हिन्दुस्तान को डेमोक्रेटिक कांस्टीट्यूशन मिलता है। इसी तरह इन्हें लेजिस्लेचर में हुकूक मिलने चाहिएं। मैं इसका मुखालिफ नहीं हूं। बल्कि हमेशा देहली के उस हिस्से के बारे में ऐसे सवाल पेश करता रहा हूं। यह हिस्सा जो हमारा भाग है, ईस्ट पंजाब का ही प्रदेश है। मैं इसके साथ हमदर्दी रखता हुआ यह नहीं चाहता हूं कि इसको प्रोविंसेज में से अलग कर दिया जाये। मैं चाहता हूं कि डा. पट्टाभि की जो स्कीम है—जुबान और कल्चर के बुनियाद पर—उसके साथ यह हिस्सा रखा जाये और इस सवाल को किसी तरह खत्म न कर दिया जाये; और इस सवाल का इसकी मेरिट पर फैसला होने की इजाजत दी जाये। इसके ऊपर कमेटी काम करे तो मुझे कोई एतराज़ नहीं है। मैं यह नहीं चाहता कि इस तरीके से इस सवाल को हल कर दिया जाये ताकि यह सवाल आइन्दा न उठे। इसलिये मैं यह कैफियत हाउस के सामने पेश करता हूं और इसके साथ प्रस्ताव की ताईद करता हूं।

***माननीय श्री जयपाल सिंह** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इस सुझाव का स्वागत करता हूं कि एक उप-समिति बनाई जाये, जो चीफ कमिश्नरों के प्रांतों के विषय पर सोच-विचार करे। मेरी दिलचस्पी यों है कि इन प्रांतों में, विशेषकर

[माननीय श्री जयपाल सिंह]

अण्डमान और निकोबार टापुओं में कहीं अधिक संख्या में कबायली लोग रहते हैं। उस उप-समिति के विषय में, जिसे विधान-परिषद् ने आदिवासी प्रदेशों–6 पूर्णतः पृथक प्रदेशों तथा 18 अंशतः पृथक प्रदेशों की समस्या को सुलझाने के लिए बनाया था–यहां कुछ कहा गया है। मैं समझता हूं कि यह आवश्यक है कि यह साफ-साफ बता दिया जाये कि यह दोनों उप-समितियां उन्हीं शब्दों से बंधी हैं जो वहां रखे गये थे। इसका सारांश यह है कि यह उप-समितियां इन आदिवासी प्रदेशों–पूर्णतः पृथक और अंशतः पृथक प्रदेशों के अतिरिक्त और भागों पर ध्यान नहीं दे सकती थीं। इस तरह समितियों ने अपना कार्य आरम्भ किया, किन्तु अब उन्हीं शब्दों के और उदार अर्थ निकालें गये हैं। और अब वह समिति अन्य और कबायली प्रदेशों (Tribal Areas) पर भी ध्यान दे सकती है। इस हालत में उन दोनों कबायली उप-समितियों की उस संशोधन द्वारा सुझाई उप-समिति के कार्य में समान रूप से दिलचस्पी रखती है। मेरा इतना कहना है कि जो अभी कबायली उप-समितियां बनी हुई हैं, उसमें से कुछ सदस्य नई समिति में, जो कि चीफ कमिश्नर के प्रांतों के विषय पर सोच-विचार करेगी, ले लेना चाहिए, क्योंकि कुछ प्रांत ऐसे हैं कि जहां पर सारी समस्या केवल कबायलियों की ही होगी। मैं संशोधन का समर्थन करता हूं।

***अध्यक्षः** अब संशोधन पर वोट लिये जायेंगे। इसको प्रस्तावक ने स्वीकार कर लिया है।

संशोधन को स्वीकार किया गया।

भाग 8–खंड 2

***अध्यक्षः** अब हम खंड 2 पर विचार करेंगे।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्, मैं उसे पेश कर चुका हूं।

***श्री के. संतानम्ः** श्रीमान्, एक वैधानिक प्रश्न है कि कबायली समिति ने अभी तक अपनी रिपोर्ट ही पेश नहीं की है।

***अध्यक्षः** किन्तु हमें तो इस समय उसी विषय पर विचार करना है। क्या कोई सदस्य इस खण्ड पर कुछ कहना चाहते हैं?

***माननीय श्री जयपाल सिंह** (बिहारः जनरल): मुझे बहुत थोड़ा ही कहना है, और मैं उसे कहना बहुत जरूरी समझता हूं ताकि उस स्थिति का प्रतिकार किया जा सके जो कि देश में शीघ्र ही भयानक रूप धारण कर सकता है। इससे

पहले कि मैं इसके विषय में कुछ कहूं मैं फिर वही कहूंगा कि जो मैंने कुछ मिनट हुए कहा था कि कबायली प्रदेश की समस्या पर विचार करने में हमें उन कबायली लोगों का भी ख्याल रखना होगा, जो कबायली प्रदेशों से बाहर रहते हैं।

श्रीमान्, सर अकबर हैदरी, आसाम के गर्वनर, नागा पहाड़ियों को 26 जून और 2 जुलाई के बीच में देखने गये। उस समय से कुछ अत्यंत दुखद बातें वहां पर हो रही हैं। सम्भव है कि सदस्यों ने समाचार पत्रों में पढ़ा होगा और सरकार के बहुत से सदस्यों के पास और मैं समझता हूं, श्रीमान्, आपके पास भी कुछ नागाओं के तार आये हैं जिससे पता चलता है कि उनका क्या करने का विचार है। स्वयं मेरे पास प्रतिदिन एक तार की औसत से तार आये हैं, अन्तिम तार और तारों की अपेक्षा कहीं अधिक चिन्ता में डालने वाला होता है। प्रत्येक तार पागलपन में एक पद आगे ही बढ़ जाता है। यदि आप मुझे बताने की आज्ञा दें तो अवस्था यह है कि कुछ लोगों ने यह कहकर नागाओं को भड़काया है कि अंग्रेजी शासन के हटने पर देश फिर से उनको मिल जाएगा। उनका विचार है कि उनका प्रदेश भी देशी राज्यों की तरह है जहां पर पूर्णाधिकार देशी राज्यों को मिल जायेंगे। इस कारण वह समझते हैं कि वह जो चाहे कर सकते हैं। यह बात कि नागा पहाड़ियां सदैव भारत का भाग रही हैं और उनको कभी भी देशी राज्यों का समानत्व प्राप्त नहीं हुआ है, नागाओं को कभी बताई ही नहीं गई हैं। इसके विपरीत ऐसा प्रतीत होता है कि नागाओं को यही बताया गया है कि नागा पहाड़ियां उन्हीं की हैं और वह कभी भारत के भाग थे ही नहीं और यह भी जैसे ही भारतवर्ष डोमीनियन बन जाये वैसे ही नागा पहाड़ियां उनकी अपनी हो जाएंगी। मान्यवर, नागा पहाड़ियों के कुछ नेता अभी देहली आये थे और सरकार के कुछ मुख्य सदस्यों से मिले। हममें से जो उनसे मिले उनको सब बता दिया. ..*(बाधा)* मैं केवल यह चाहता हूं कि मेरा कथन नागा पहाड़ियों तक गूंजे और उनको पता चले कि कुछ स्वार्थी लोगों ने यह गलत बताया है कि बरतानियां सरकार की जून वाली योजना के अनुसार वह भी वही कर सकते हैं जो देशी राज्य कर सकते हैं। मैं यह केवल इस कारण कहना चाहता था क्योंकि मैं समझता हूं कि इस सभा भवन से कुछ बातें निश्चित रूप से कही जायें। एक तार जो आन्तरिक सरकार के सदस्यों के पास भेजा गया था उसके अनुसार विधान-परिषद् ने व्यक्त किया है कि नागाओं ने संघ में सम्मिलित होने का निमंत्रण अस्वीकार कर दिया है। प्रस्ताव में निमंत्रण का प्रश्न ही नहीं उठता। इसके अतिरिक्त निमंत्रण की कोई आवश्यकता ही नहीं है; कारण यह है कि नागा सदैव भारत के भाग

[माननीय श्री जयपाल सिंह]

रहे हैं इस कारण उनके भारत से निकल जाने का प्रश्न ही नहीं उठता। वह कोई देशी राज्य थोड़े ही हैं।

मैं आशा करता हूं कि वहां पर जो गड़बड़ी पैदा की जा रही है, वह इस भवन के दिये हुए व्यक्तव्य से दूर हो जायेगी। शुद्ध वास्तविकता यह है कि नागा पहाड़ियां भारत का भाग हैं और वह कभी भी उसके बाहर नहीं हैं।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले** (मद्रास: जनरल): श्रीमान्, मैंने आदिवासियों की रक्षा के लिये एक संशोधन की सूचना दी थी, किन्तु नियम यह रखा गया है कि जो कोई बात विधान-परिषद् के सामने आये उस पर पहले परामर्शदातृ-समिति की रिपोर्ट होनी चाहिये। अभी तक परामर्शदातृ-समिति ने कबायली भागों और आदिवासियों के विषय में जो बहुत से प्रान्तों में बटे हुए हैं, अपनी रिपोर्ट पेश नहीं की है, और जब तक वह रिपोर्ट न आ जाये मैं इस संशोधन को पेश नहीं करना चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** इसका असल मतलब यह है कि किसी योजना पर निर्णय करने से पहले उप-समिति की रिपोर्ट पर ध्यान देना आवश्यक है। मैं नहीं समझता कि इस विषय पर किसी सज्जन का दूसरा मत भी हो सकता है। इस कारण मैं इस पर वोट लेता हूं।

खंड 2 को स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** मैं यहां यह बता देना चाहता हूं कि अगर इस सम्बन्ध में और संशोधन हैं तो उन पर तब विचार किया जाएगा जब रिपोर्ट सभा के सामने रखी जाएगी।

***श्री के. संतानम्:** श्रीमान्, मेरा भी एक संशोधन है, जो यह है कि भाग 8 के पश्चात् निम्नलिखित भाग जोड़ दिया जाए:

''भाग 8 अ-आकस्मिक संकटाधिकार

(1) यदि किसी समय प्रांत का गवर्नर यह समझे कि ऐसी दशा आ पहुँची है जिसमें प्रांत की सरकार इस विधान के नियमानुसार नहीं चलाई जा सकती और इस बात की सूचना वह संघ के राष्ट्रपति को दे, या यदि राष्ट्रपति को ही यह विश्वास हो जाये कि प्रांतीय शासन टूट जायेगा तो वह कोई भी कार्यवाही कर सकता है जो

कि वह आवश्यक समझे। इस कार्यवाही में (1) प्रांतीय विधान को स्थगित करना, (2) प्रान्त में लागू होने वाले विशेष कानूनों की घोषणा करना और (3) प्रान्त के गवर्नर और अन्य सरकारी कर्मचारियों को आज्ञा देना तथा आदेश जारी करना भी शामिल है।

राष्ट्रपति द्वारा अगर कोई कार्यवाही की गई है तो वह उसकी सूचना संघीय व्यवस्थापिका को देंगे और उनकी पहली कार्यवाही के छः माह के अन्दर यदि व्यवस्थापिका की दोनों सभायें उसकी पुष्टि न कर दे तो प्रान्त का अपना विधान पुनः चालू कर दिया जायेगा। हर छठे महीने व्यवस्थापिका द्वारा स्थिति का सिंहावलोकन किया जायेगा और यदि आवश्यकता हुई तो हर छठे महीने संकटकालीन कार्यवाही की स्वीकृति ली जायेगी।

ज्यों ही राष्ट्रपति को यह विश्वास हो जायेगा कि संकट की स्थिति नहीं रह गई तो वह स्वाभाविक विधान को पुनः लागू कर देंगे।''

यह सब उन नियमों के पूरक स्वरूप हैं जो कि अभी प्रान्तीय विधान में रखे गये हैं। श्री गुप्ते के संशोधन के अनुसार जिसे स्वीकार कर लिया गया है। गवर्नर को दो सप्ताह का आकस्मिक संकट की स्थिति के समय कार्यवाही करने का अधिकार होगा। यदि कोई आकस्मिक संकट की स्थिति आ जाए तो उसे राष्ट्रपति की स्वीकृति अवश्य लेनी होगी। यदि आकस्मिक संकट की स्थिति उत्पन्न हो जाए तो और दो सप्ताह तक की कार्यवाही अपर्याप्त हो तब भी राष्ट्रपति और संघ की सरकार कोई कार्यवाही करेगी। मैंने दो दशायें बताई हैं जिनमें राष्ट्रपति को कार्यवाही करनी पड़ेगी। एक तो वह है जब गवर्नर इस बात की सूचना दे कि जो विशेष अधिकार उसे दिये गये हैं उनसे वह स्थिति को नहीं सम्भाल सकता, और दूसरी यह कि जब प्रान्त की सरकार इस प्रकार टूट जाए कि वह कुछ कर ही नहीं सके और स्थिति को काबू में लाने में कोई अधिकारी ही न रह जाए तभी राष्ट्रपति अपने भरोसे कार्यवाही करेगा। जब वह ऐसा करेगा तो वह संघीय व्यवस्थापिका सभा को उसी सूचना देगा। और प्रत्येक छठे महीने ऐसा करता रहेगा और जैसे ही आकस्मिक संकट की स्थिति समाप्त हो जायेगी वैसे ही विधान फिर से चालू हो जायेगा।

[श्री के. संतानम]

मैं समझता हूं कि यह सब कुछ उपयुक्त और अत्यंत आवश्यक है। उदाहरणतः यदि प्रान्तीय संगठन पुलिस की मशीनरी टूट जाए और गवर्नर कुछ न कर सके तो उसको राष्ट्रपति से अधिकार मांगने पड़ेंगे और यह नियम राष्ट्रपति को यह अधिकार देता है। इस कारण मैं आशा करता हूं कि मैंने जो सुझाव आपके सामने रखा है उसको सारी सभा स्वीकार कर लेगी।

***श्री एच.वी. कामठः** मान्यवर, इस पर ध्यान देते हुए कि श्री संतानम् का प्रस्ताव के भाग 8 से कोई सम्बन्ध ही नहीं है, मेरी समझ में नहीं आता कि उसको भाग 8 में किस प्रकार दिया गया है।

***अध्यक्षः** उन्होंने एक नये भाग के जोड़ने का प्रस्ताव किया है और उस नये भाग को आकस्मिक संकटाधिकार कहा है।

***श्री बी.एम. गुप्ते** (बम्बईः जनरल): श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव पेश करना चाहता हूं कि भाग 8 के बाद निम्नलिखित नया भाग जोड़ दिया जायेः

''भाग 8 अ–आकस्मिक संकटाधिकार

(1) इस विधान के भाग...की धारा के अंतर्गत प्रान्त के गवर्नर के रिपोर्ट करने पर, संघ के राष्ट्रपति को अधिकार होगा कि वह अपने मंत्रिमंडल से परामर्श करके, एक घोषणा निकाले जिसके द्वारा वह सभी अधिकारों को, या किसी भी अधिकार को, जो किसी प्रान्तीय संस्था या अधिकारी को प्राप्त हो, या जिन पर वे अमल कर सकते हों, सिवा उन अधिकारों के जो हाईकोर्ट को प्राप्त हों, या उसके द्वारा अमल में जा सकते हों, स्वयं ग्रहण कर सकते हैं, और इन अधिकारों में गवर्नर द्वारा प्रचारित घोषणा की पुष्टि करने का, उसमें संशोधन करने का, तथा उसका प्रत्याख्यान करने का अधिकार भी सम्मिलित है।

(2) इस धारा के अंतर्गत निकली हुई घोषणा 2 माह के व्यतीत हो जाने पर प्रयोग में न रह जायेगी, अगर समय-समय पर संघीय व्यवस्थापिका द्वारा स्वीकृत एक प्रस्ताव से घोषणा को और किसी अधिक काल के लिये चालू न किया जाये।''

श्री संतानम ने बता दिया है कि ऐसा खण्ड कितना जरूरी है। हमने प्रान्तीय विधान के खण्ड 15 को स्वीकार करके यह मान लिया है कि कुछ आकस्मिक

संकटाधिकार राष्ट्रपति के पास रहेंगे। किन्तु रिपोर्ट में उन सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा गया है और यही मेरे और संतानम् के संशोधन का कारण है। वह दोनों इस त्रुटि को हटाने के लिये हैं। मेरे संशोधन के अनुसार राष्ट्रपति गवर्नर की की रिपोर्ट मिलने पर अपनी मंत्री सभा की सम्मति लेने के पश्चात् घोषणा कर सकते हैं चूंकि गवर्नर को तुरन्त काम करने का अधिकार है इस कारण राष्ट्रपति को अपने मन्त्रिमंडल की सम्मति के बिना काम करने की कोई आवश्यकता नहीं है और यही कि राष्ट्रपति अपनी मंत्रीसभा की सम्मति लेने पर ही कुछ कर सकता है। यह आवश्यक बात है जो मैं आपको बता देना चाहता हूं; यही मेरे और श्री संतानम् के संशोधनों में अन्तर है।

***श्री के. संतानम्:** मान्यवर, संघ-विधान के अनुसार राष्ट्रपति सदैव अपने मंत्रियों के परामर्श पर ही चलते हैं।

***श्री बी.एम. गुप्ते:** यह तो ठीक है। मैं तो केवल उस पर जोर देना चाहता हूं। गवर्नर के अधिकारों के सम्बन्ध में जो वाद-विवाद हुआ था, उसमें यह मान लिया गया था कि राष्ट्रपति को उल्लंघनाधिकार देना चाहिये। गवर्नर को अधिकार देने के विषय पर बहुत वाद-विवाद हुआ, किन्तु जहां तक राष्ट्रपति का सम्बन्ध है यह सर्वसम्मति से निश्चय किया गया था कि उल्लंघनाधिकार राष्ट्रपति को ही दिया जायेगा। पर यह शर्त लगा दी गई कि उसको अपने मंत्रियों का परामर्श अवश्य लेना होगा।

मेरे और श्री सन्तानम् के संशोधनों में जो अन्तर है, वह यह है कि उन्होंने छः माह का समय रखा है और मैंने केवल दो ही माह का समय रखा है। यह अधिकार एक विशेष दशा के लिये ही है और इस कारण कम से कम अधिकार देने चाहियें और दो माह का समय व्यवस्थापिका सभा को बुलाने के लिये पर्याप्त है। उतने ही अधिकार देने चाहियें जितने अनिवार्य हों। संघीय व्यवस्थापिका सभा इस विषय में सर्वोच्च अधिकारी है, इसलिये उसकी स्वीकृति अवश्य लेनी चाहिये। इसलिये यह मैंने रखा है कि जब तक व्यवस्थापिका सभा राष्ट्रपति के कार्य पर दो माह के अन्दर अपनी स्वीकृति न दे दे, राष्ट्रपति की घोषणा प्रयोग में न रह जायेगी। चूंकि व्यवस्थापिका सभा सर्वोच्च है, इस कारण मैंने उसके लिये समय की रोक नहीं की है। यदि आवश्यक हो तो व्यवस्थापिका सभा समय-समय पर घोषणा को स्वीकार कर सकती है। यदि कोई आकस्मिक संकट आ पड़ता है तो

[श्री बी.एम. गुप्ते]

वह अधिक समय तक नहीं रहेगा; किन्तु यदि वह जारी रहा तो व्यवस्थापिका सभा समय-समय पर घोषणा के जारी रहने के समय को बढ़ा सकती है।

इस कारण मेरा यह कहना है कि अपेक्षाकृत मेरा संशोधन अच्छा है। वास्तव में मेरा संशोधन इस सभा के द्वारा गवर्नर की घोषणा करने के अधिकार को मान लेने के आधार पर है। श्री सन्तानम् का संशोधन इस दशा के अनुसार नहीं है, वह गवर्नर की घोषणा के विषय में कुछ नहीं कहता। वह तो इस अनुमान के आधार पर बना है कि गवर्नर को केवल रिपोर्ट करने का अधिकार है; इस कारण मेरा यह कहना है कि मेरा संशोधन दूसरे की अपेक्षा अधिक उपयुक्त है, और इस कारण इस सभा को उसे मान लेना चाहिये।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): यदि सर गोपालस्वामी यह बता दें कि वह कौन से संशोधन को स्वीकार करने के लिये तैयार हैं, तो इससे वाद-विवाद सरल हो जायेगा।

***अध्यक्ष:** सर एन. गोपालस्वामी क्या आप इस समय कुछ कहना चाहते हैं?

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् अध्यक्ष महोदय!

***अध्यक्ष:** श्री आयंगर!

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** श्रीमान्, किस आयंगर को कह रहे हैं?

***अध्यक्ष:** सर एन. गोपालस्वामी आयंगर।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् जी, श्री सिधवा ने जो पूछा है, उसका मैं साफ-साफ जवाब नहीं दे सकता हूं, किन्तु मैं अवश्य ही अपनी विचार-धारा आपको बताऊंगा। दोनों संशोधन जो प्रस्तावित किये गये हैं, उस व्यवस्था के लिये हैं जिसे प्रान्तीय विधान के सम्बन्ध में सभा ने स्वीकार कर लिया है। इस सभा को याद होगा कि जब हम प्रान्तीय विधान के विषय में वाद-विवाद कर रहे थे तो उस विधान में एक ऐसा खंड रखा गया था जो भारत सरकार के 1935 के एक्ट की धारा 93वीं है; सिवा इसके कि विस्तार की बातों में थोड़ा परिवर्तन किया गया है। गवर्नर को सरकार के सभी या कुछ कर्तव्यों को, या उन अधिकारों को जो प्रान्तीय संस्थाओं को दिये गये हैं, अपने

हाथ में लेने का अधिकार तो दिया गया था; उसके अतिरिक्त इस आशय का एक खन्ड भी था:

''गवर्नर की घोषणा उसके द्वारा तुरंत संघ के राष्ट्रपति के पास भेजी जायेगी जो उसकी प्राप्ति पर ऐसी कार्यवाही कर सकता है जिसे वह अपने आकस्मिक संकटाधिकार के अंतर्गत उपयुक्त समझे।''

इस कारण यह आवश्यक है कि हम कहीं पर विधान में इसका प्रबन्ध करें कि किसी प्रान्त में आकस्मिक संकट आने पर राष्ट्रपति को क्या अधिकार होगा, और इस दृष्टिकोण से दोनों संशोधन उस कमी को पूरा करते हैं जो कि अन्यथा विधान के रेखाचित्र में रहेंगे। जिस विषय पर ध्यान देना है वह यह है कि किस प्रकार की योजना रखनी चाहिये। गवर्नर को वास्तविक प्रान्तीय विधान के सब या उनसे कुछ भागों को स्थगित करने और प्रान्तीय विधान के अनुसार भिन्न अधिकारियों के सब अधिकारों को अपने हाथ में लेने का अधिकार दिया गया है। ऐसा करने के पश्चात् उसे राष्ट्रपति को एक रिपोर्ट देनी होगी यदि और कुछ नहीं हुआ तो दो सप्ताह के पश्चात् घोषणा प्रयोग में नहीं रहेगी। आकस्मिक संकट ऐसा हो सकता है कि दो सप्ताह से अधिक चले, किन्तु यह भी संभव है कि संघ के राष्ट्रपति उन असाधारण कार्यवाहियों को उपयुक्त न समझे जो कि उस दशा में गवर्नर ने की हो। इस कारण यह आवश्यक है कि हमें राष्ट्रपति को कुछ अधिकार दे देने चाहियें जिससे कि प्रान्त के गवर्नर की रिपोर्ट मिलने पर वह कुछ कार्यवाही कर सके। श्री संतानम् ने अपनी रिपोर्ट में बहुत-सी बातें विस्तारपूर्वक बताई हैं जो कि प्रान्त के गवर्नर की रिपोर्ट मिलने पर राष्ट्रपति को करनी चाहियें। मेरे लिये उन सब बातों को मान लेना जो उन्होंने अपने संशोधन में समझाई हैं कि उन अधिकारों में राष्ट्रपति द्वारा प्रान्तीय विधान को स्थगित किया जाए, प्रान्त में लागू होने वाले विशेष कानूनों को जारी करना और गवर्नर या अन्य प्रान्तीय कर्मचारियों को आज्ञायें देने के अधिकार शामिल हैं। गवर्नर कुछ कार्यवाही करता है, वह ठीक भी हो सकता है, और गलत भी। यदि वह ठीक है तो उसे दो सप्ताह से भी ज्यादा जारी रखा जा सकता है। यद्यपि साधारणत: दो सप्ताह का समय भी काफी है, और यदि वह गलत है तो खंड के अनुसार जो कि प्रान्तीय विधान के सम्बन्ध में स्वीकार कर लिया गया है, राष्ट्रपति को गवर्नर की घोषणा को स्थगित करने का अधिकार है। और फिर राष्ट्रपति अपनी ही कार्यवाही करेंगे जो कि उस आकस्मिक संकट के लिये वह उपयुक्त समझे। यह कि राष्ट्रपति को इतने अधिकार दे दिये जायें जितने कि श्री संतानम् ने बताये

[माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर]

हैं यह एक ऐसा विषय है जिस पर बहुत विचार करने की आवश्यकता है। यह प्रान्तीय स्वतंत्रता पर ऐसा हस्तक्षेप है कि जिसे मानने के लिये हममें से बहुत से प्रस्तुत नहीं होंगे। किन्तु यह आवश्यक है कि राष्ट्रपति को उतने अधिकार होने चाहियें जो स्थिति विशेष को उन्हें संभालने के लिये आवश्यक हों। यदि श्री संतानम् उन लोगों को, जो इस विधान को तैयार करेंगे, यह आज्ञा दें कि वह इस योजना पर भाव और भाषा दोनों ही दृष्टियों से समधिक ध्यान दे सकें और विधान सभा के सामने ऐसा प्रस्ताव रखे कि जिसे गवर्नर की कार्यवाही और उसकी रिपोर्ट पर जो अध्यक्ष को जो कार्यवाही करनी पड़े उन दोनों में संतुलन होता हो तो मैं राष्ट्रपति को आकस्मिक संकटाधिकार देने के सिद्धान्त को स्वीकार करता हूं। यदि इन संशोधनों के प्रस्तावक मेरे आश्वासन पर विश्वास रखे तो मैं कह सकता हूं कि हम ऐसी योजनायें रखेंगे जो इस सिद्धान्त के आधार पर होंगी। फिर श्री संतानम् और श्री गुप्ते को इसके लिये समय रहेगा कि जब मसविदा सभा के सन्मुख आये तो वह उसको देखें और वह जो संशोधन उपयुक्त समझें सभा में प्रस्तावित करें। इस कारण मैं यह कहूंगा कि उस आश्वासन के आधार पर वह उन संशोधनों को वापस ले लें, जिनकी उन्होंने सूचना दी है।

***श्री के. संतानम्:** आश्वासन के आधार पर मैं अपना संशोधन वापस लेता हूं।

***श्री बी.एम. गुप्ते:** श्रीमान्, मैं भी अपने संशोधन को वापस लेता हूं।

(सभा की आज्ञानुसार संशोधन वापस ले लिये गये।)

भाग 9

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, मैं भाग नौ को पेश करता हूं, जो इस प्रकार हैं:

''अल्पसंख्यकों की रक्षा सम्बन्धी व्यवस्थायें जिन्हें परामर्शदातृ समिति की रिपोर्ट के आधार पर विधान-परिषद् ने स्वीकार कर लिया है, विधान में शामिल कर ली जायें।''

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है कि सभा भाग 9 को स्वीकार करे।

प्रस्ताव को स्वीकार किया गया।

इसके पश्चात् सभा बृहस्पतिवार, 31 जुलाई, सन् 1947 ई. के प्रात: दस बजे के लिये स्थगित हो गई।